1998 से निरंतर प्रकाशित

ISSN 2581-446X

वर्ष-2, अंक-1, अगस्त-सितम्बर 2018 ₹ 25/-

RNI No. MPHIN/2017/73838

कला समय

कला और विचार की द्वैमासिकी

सार्वभौमिक संगीत पर एकाग्र-2

संपादक
भँवरलाल श्रीवास

Scanned with CamScanner

स्वास्थ्य क्षेत्र में क्रांतिकारी कदमों का दिख रहा असर
मध्यप्रदेश में घट रही है मातृ एवं शिशु मृत्यु दर

मध्यप्रदेश सरकार ने वर्ष 2003 से लेकर 2018 तक स्वास्थ्य क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं जिनके कारण लोगों को बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं मिल रही हैं और वे स्वस्थ जीवन जी रहे हैं।

पूरा किया विकास का वादा, आगे है अटल इरादा

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी /CMMadhyaPradesh /CMMadhyaPradesh आकल्पन : म.प्र. माध्यम/2018

Scanned with CamScanner

1998 से निरंतर प्रकाशित
RNI NO. MPHIN/2017/73838

कला समय पत्रिका अब वेबसाइट पर उपलब्ध
www.kalasamaymagazine.com

ISSN 2581-446X
(वर्ष : 21+2) पूर्णांक-94,
वर्ष-2, अंक-1, अगस्त-सितम्बर 2018

माधवराव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल द्वारा पुरस्कृत

कला समय

कला और विचार की द्वैमासिकी

❁
संरक्षक
नर्मदा प्रसाद उपाध्याय
94250 92893

❁
परामर्श
लक्ष्मीनारायण पयोधि
9424417387
ललित शर्मा
98298 96368
राग तेलंग
9425603460

❁
प्रतिनिधि
आस्था सक्सेना
94138 27189
गोपेश वाजपेयी
94243 00234

❁
कानूनी सलाहकार
जयंत कुमार मेंढे (एडवोकेट)

❁
संपादक
भँवरलाल श्रीवास
bhanwarlalshrivas@gmail.com
94256 78058

❁
सह संपादक
लक्ष्मीकांत जवणे
laxmikantjawney@gmail.com
99936 22228

❁
उप संपादक
राहुल श्रीवास
djrahulshrivas@gmail.com
92003 00006

❁
संपादक मंडल
सजल मालवीय
साहित्य

हरीश श्रीवास
कला

नरिन्दर कौर
प्रबंध

सदस्यता शुल्क

वार्षिक	: 150 /-	(व्यक्तिगत)
	: 175 /-	(संस्थागत)
द्वैवार्षिक	: 300 /-	(व्यक्तिगत)
	: 350 /-	(संस्थागत)
चार वर्ष	: 500 /-	(व्यक्तिगत)
	: 600 /-	(संस्थागत)
आजीवन	: 5,000/-	(व्यक्तिगत)
	: 6,000/-	(संस्थागत)

(कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाइन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा कला समय के नाम से उक्त पते पर भेजें)

संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग संपर्क -
जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

ऑनलाइन सुविधा : 'कला समय' का बैंक खाता विवरण
ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स की शाखा **(IFSC : ORBC0100932)** में **KALA SAMAY** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में नगद राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

कला समय पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, यह जरूरी नहीं कि संपादक, प्रकाशक, मुद्रक उनसे सहमत हों। पत्रिका से सम्बन्धित समस्त विवाद, भोपाल न्यायालय के अधीन ही रहेंगे।
सम्पादन, संचालन, प्रबंधन एवं प्रकाशन- अवैतनिक/अव्यवसायिक

विशेष नोट : © सर्वाधिकार सुरक्षित 'कला समय' प्रबंधन यह स्पष्ट करना आवश्यक समझता है कि 'कला समय' में प्रवेशांक फरवरी-मार्च 1998 से लेकर अब तक प्रकाशित होने वाली समस्त सामग्री या सामग्री के अंश के पुनर्प्रकाशन तथा पुनरुत्पादन के सर्वाधिकार कॉपीराईट अधिनियम के अंतर्गत 'कला समय' के पास सुरक्षित हैं। अत: कोई भी व्यक्ति या संस्था 'कला समय' की इस सामग्री या इस सामग्री के अंश का उपयोग प्रबंधन की पूर्वानुमति के बिना ना करें।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा दृष्टि ऑफसेट, 36-37, प्रेस काम्पलेक्स, जोन नं-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- भँवरलाल श्रीवास

Scanned with CamScanner

कुँवर रवीन्द्र के चित्र बोलते है और रंगों को भाषा देते है।

कुंवर रवीन्द्र जन चित्रकार हैं सिर्फ इसलिए नहीं कि उनके चित्रों के विषय आम जन के सरोकारों से जुड़े हैं बल्कि इसलिए भी कि उन्होंने आम जन के लिए चित्र बनाएं हैं। शायद ही कोई ऐसा कवि रचनाकार होगा जिसका आत्मचित्र रवीन्द्र ने न उकेरा हो। कविता पोस्टरों में अनगिनत कविताएँ उनके रंगों के साथ जुगलबंदी करती है, हिंदी में निकलने वाली पत्रिकाओं के वह आज सबसे अधिक जाने पहचाने आवरण सज्जाकार है, हिन्दी का आम रचनाकार अपनी पुस्तक के आवरण के लिए उनसे अनुरोध कर सकता है। रचनाकारों के बीच रवीन्द्र की सहज उपस्थिति ने साहित्य और पेंटिंग के बीच मजबूत पुल का निर्माण किया है। रवीन्द्र ने अब तक 17000 हजार रेखांकन और पेंटिंग बनाये हैं, उनके कई एकल और सामूहिक 'चित्र-प्रदर्शन' आयोजित हुए हैं, इसके साथ ही वह एक कवि भी हैं। उन्हें पेंटिंग के लिए मध्य प्रदेश का सृजन सम्मान और बिहार से कला रत्न सम्मान प्राप्त है।

इस बार

- संपादकीय / 5
  मनुष्य प्रकृति से कितना दूर कितना पास
- कला निकष / 6
  लक्ष्मीकांत जवणे
- फ़्यूजन से भारतीय संगीत को कोई नुकसान नहीं / 8
  युवा सितार वादक असद खान से विनोद नागर की बातचीत
- भारतीय कला दृष्टि : परिक्रमा नहीं यात्रा/10
  नर्मदा प्रसाद उपाध्याय
- पद्मश्री स्वामी पागलदास जी महाराज के सानिध्य के प्रेरक संस्मरण /15
  डॉ. संतोष नामदेव
- ठुमरी/20
  पं. श्रीधर व्यास 'नृत्य पुरोधा'
- भारतीय शास्त्रीय संगीत की ध्रुवपद गायकी के शिखर पुरुष : 'वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग'/23
  डॉ. श्याम सुन्दर शर्मा
- **विश्व कविता : मुइसेर एनिया की कविताएँ, अनुवाद : मणि मोहन /26**
- **मधु प्रसाद के गीत / 27**
- **राजेश सिंह की कविता / 28**
- **दीपक पंडित की ग़ज़लें / 29**
- डॉ. प्रेम प्रकाश जौहरी एवं उनकी शिक्षण पद्धति / 30
  प्रो. सुधा अग्रवाल
- तबला पुरुष, पद्मविभूषण पंडित किशन महाराज / 34
  देवेन्द्र सक्सेना 'प्रज्ञापुत्र'
- 'गुन ना हिरानों गुन गाहक बौरानों है'/36
  प्रो. पं. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'
- विलक्षण संगीतज्ञ : डॉ. लालमणि मिश्र /38
  आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव
- अपूर्व सिद्ध हुई मेरी पुस्तक : 'शास्त्रीय संगीतकारों पर हास्यदृष्टि!' / 40
  निर्मिश ठाकर
- 'संगीत कला निकेतन' जयपुर में रंगारंग सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ/41
  पं. विजय शंकर मिश्र
- संगीत में समर्पण जरूरी है/42
  दामोदर राव
- स्मृति शेष /43
  पंडित कुमार लाल मिश्र
- समवेत (सांस्कृतिक समाचार)/ 44

अंतिम आवरण के चित्रकार, कवि- रमेश गौतम

सम्मान सेवा का आभूषण है/डॉ. विजयेन्द्र गौतम एवं आस्था सक्सेना के गायन से श्रोता मंत्रमुग्ध हुए/हिन्दी भवन के नरेश मेहता कक्ष में कृति लोकार्पण/एन.एल. खंडेलवाल को 'सम्पादक रत्न' सम्मान/राजकुमार कोरी 'राज़' के मुनज़िर का लोकार्पण/ ध्रुव शुक्ल का रचना पाठ/म.प्र. के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य पर केन्द्रित 'पहला अंतरा' का विशेषांक लोकार्पित/ 'अंतरा' के अंतर्गत काव्य पाठ/कला समय प्रतिनिधि आस्था सक्सेना, कोटा की झलकियाँ।/ संस्था समाचार : अशोक शाह के कविता संग्रह 'अनुभव का मुँह पीछे है' पर विमर्श/ सुधा अग्रवाल का अभिनंदन/आपके पत्र।

- कला समय : नवांकुर, नन्हें कलाकारों की दुनिया/49
  ऋषित चक्रवर्ती/ हीर सिसोदिया/नृत्य मुद्रा में बालिकाएँ
- महिला प्रतिभाएँ वक्र रेखाओं में /50
  निर्मिश ठाकर

शब्द संयोजन एवं आकल्पन – **शिवम् ग्राफिक्स**, वाट्सएप नं.–07974917691, **आवरण चित्र** – कुँवर रवीन्द्र, **अंतिम आवरण चित्र**– रमेश गौतम
छायाचित्र – मनीष सराठे, **रेखांकन** – रमेश गौतम, **सहयोग** – धनसिंह, चेतना श्रीवास, देवेन्द्र सक्सेना।

Scanned with CamScanner

भारतीय संगीत में घराना परंपरा

राह हारी मैं न हारा
थक गये पल, धूल के उड़ते हुए रज कण घनेरे
पर न अब तक मिट सके हैं, वायु में पदचिह्न मेरे
जो प्रकृति के जन्म ही से
ले चुके गति का सहारा
राह हारी मैं न हारा
– शील

संगीत अपनी कलात्मकता को खोने नहीं देना चाहता। यह कलात्मकता उसे समझने और उसके अभ्यास में निहित होती है। इसी प्रवृत्ति ने गुरु शिष्य परंपरा को जन्म दिया।

संगीत की शिक्षा समर्पण भाव के साथ तन्मयता और कठिन अभ्यास की मांग करती है। शिष्य की छोटी उम्र इसके लिए अनुकूल होती है कि उस पर किसी आग्रह की छाप नहीं होती। शिष्य संगीत के ज्ञान के साथ गुरु की तकनीक के माध्यम से उनके हाव-भाव को भी ग्रहण करते चलता है, जो एक शैली के रूप में हस्तांतरित हो जाती है और यही शैली 'घराना' कहलाती है।

हमारे यहाँ यह शैली या घराना गुरु के नाम से नहीं उस स्थान विशेष के नाम से अधिक प्रचलित है, इस विशिष्टता में गुरु का श्रेय ना लेने के विनम्र भाव के साथ उनके मातृ-भूमि के प्रति निष्ठाभाव का परिचय भी मिलता है जो हमारी संस्कृति को रेखांकित करता है।

हिन्दुस्तानी संगीत के कुछ उल्लेखनीय घराने इस प्रकार हैं :-

ग्वालियर घराना, आगरा घराना, किराना घराना, बनारस घराना, अतरौली-जयपुर घराना, रामपुर-सहस्वान घराना, पटियाला घराना, दिल्ली घराना और इंदौर घराना।

ये घराने हमारी जमीन के संगीत को ना सिर्फ जीवित रखे हुए हैं वरन इसे गुरु शिष्य परंपरा के द्वारा नई पीढी की सम्भावनाओं को इसमें निवेशित कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त ये घराने संगीत के अलंकारों के वे खजाने हैं जो हिन्दुस्तानी संगीत की सजधज को विश्व में विशिष्टता प्रदान करते हैं।

कला समय के पिछले दोनों अंक 'विलुप्त होती लोक कलायें' तथा 'सार्वभौमिक संगीत पर एकाग्र-1' अपनी सामग्री तथा साज-सज्जा के लिए देश के सभी पाठकों द्वारा सराहे जा रहे हैं। शामिल सभी रचनाकारों तथा साज-सज्जा के छविकारों का कला समय की ओर से सादर अभिनन्दन हैं तथा बधाई भी।

इस अंक में रचनात्मक सहयोग- विनोद नागर, नर्मदा प्रसाद उपाध्याय, डॉ. संतोष नामदेव, पं. श्रीधर व्यास 'नृत्य पुरोधा', मणि मोहन, मधु प्रसाद, राजेश सिंह, दीपक पंडित, डॉ. श्याम सुन्दर शर्मा, प्रो. सुधा अग्रवाल, देवेन्द्र सक्सेना 'प्रज्ञापुत्र', प्रो. पं. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग', आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव, निर्मिश ठाकर, पं. विजय शंकर मिश्र, दामोदर राव।

इसी बीच देश के अविस्मरणीय शिल्पी श्री अटल बिहारी वाजपेयी, विधेयक ऊर्जा के स्रोत संत श्री तरुण सागर जी तथा मूर्धन्य साहित्यकार, आलोचक श्री विष्णु खरे, प्रभावी कमेंटेटर श्री जसदेव सिंह के महा-प्रयाण चिंतन जगत की अपूरणीय क्षति हैं।

कला समय की ओर से भाव-सिक्त श्रद्धांजलि।

सदैव की भाँति आपके रचनात्मक सहयोग एवं मार्ग-दर्शी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा में-

– भँवरलाल श्रीवास

Scanned with CamScanner

कला निकष

विलयन बनाम फ्यूज़न

''संगीत की इस सार्वभौमिक यात्रा में सुर बड़े पुरजोर अंदाज़ में एक गुजारिश करते नज़र आते हैं कि धरती नामक इस उपग्रह पर अक्षांश और देशांश से बेपरवाह, उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के बीच का खालीपन और अलहदापन महज एक हौआ (chimera/fallacy) है, वर्ना हम काले-सफ़ेद, ठिंगने-ऊँचे, मूढ़-बुद्धिजीवी, पूरबी-पच्छिमी, वाम दक्षिणी सबके पास एक सा स्वरयंत्र और एक से कान है, सबके हर्षोल्लास एक हैं ।''

पिछले निकष की इन पंक्तियों से रुकी हुई बात फिर शुरू करता हूँ ।

प्रेरणा मिलना यानि उस बिंदु से अपने आप को ऐसे जोड़ना कि जोड़ ऐसा हमवार या यकसां हो जाए कि फिर शिनाख्त के काबिल ना रहे।

श्रुति कहती है कि मयूर (मोर) से षडज् (सा), धेनु (गाय) से ऋषभ (रे), अजा या छाग: (बकरी) से गांधार (ग), क्रौंच (सारस) से मध्यम (म), कोकिला (कोयल) से पंचम (प), अश्व (घोड़ा) से धैवत (ध) तथा गज या हस्ति (हाथी) से निषाद (नि); इन सात स्वरों को क्रमबद्ध किया गया है।

मनुष्य ने अपनी 'आहत्' ध्वनि को रागात्मक बनाने के लिए इन सहयात्री जीवों की आवाजों से प्रेरणा ली जो न केवल एक कौतुक है बल्कि निसर्ग से हमारी समरसता है। यही समरसता दुनिया में संगीत का पहला विलयन (fusion) रही होगी।

फ्यूज़न पर अकादमिक बात या विश्लेषण की बजाय बतौर नमूना मौसिकी के जानकारों और फनकारों के कौतुकों को देखते हैं - यू एस ए की एक स्टेट नार्थ कैरोलिना में 1935 में, ड्यूक एलिंग्टन ने एक सांगीतिक पद्य रचा जो 'इन अ सेण्टिमेण्ट्ल मूड' के नाम से खूब प्रसिद्ध हुआ। इसका शब्द संयोजन मैनी कुर्ट्ज़ का था। यह जैज़ था। इसकी खूबी जैज़ की खूबी है, यह आशु रचित (तुरंत स्वस्फूर्त) था। इसका किस्सा कुछ यूं ड्यूक एलिंग्टन से लोगों तक पहुंचा कि वह एक तम्बाखू के गोदाम में आयोजित दोस्तों की महफ़िल थी। महफ़िल में दो युवतियों और एक युवक के बीच कहासुनी से बात झगड़े तक जा पहुँची। एलिंग्टन साहब ने माहौल की तप्त तमतमाहट को ठंडा करने के लिए दोनों युवतियों को पियानो के दोनों सिरों पर अलग अलग खड़ा कर दिया, यह वही पियानो था जिस पर खुद के बजाये तरानों और तरन्नुम से उन्होंने मजलिस को खुशनुमा बनाए रखा था। वहाँ उन्होंने तुरत फुरत जो धुन तैयार की और उस पर मैनी कुर्ट्ज़ जनाब ने जो शब्द संयोजन किया, वही 'इन अ सेण्टिमेण्ट्ल मूड' म्यूजिकल वर्स है जिसने बला की शोहरत बटोरी।

'इन अ सेण्टिमेण्ट्ल मूड' पर अनेकानेक संगीताचार्यों ने हाथ आजमाये, फिल्मों तक को इस कम्पोजीशन ने नवाज़ा। सबसे बड़ी बात संगीत की दुनिया में इसकी वजह से अनेक हाहाकारी विमर्श हुए जिन्होंने जैज़ को एक विधा के रूप में स्थापित किया।

इन विमर्शों और जैज़ की लोकप्रियता ने इसे संगीत की शास्त्रीयता की समस्त अवधारणाओं की आश्चर्यजनक निकटता तक ला पहुंचाया इस तथ्य के साथ कि जैज़ एक 'करत विद्या' है।

जैज़ की कुछ अनोखी खासियतें हैं -

- यह स्वत:स्फूर्त होता है।
- कोई एक संगीतकार ध्वनि या बाजे से लय को शुरुआती स्वर और संगतकार ताल देता है जिसे तुरंत दूसरा वादक या गायक लपककर उसमें अपना कुछ जोड़ देता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा ...., इस प्रकार हर अगला कलाकार उसमें कुछ नया जोड़ते चलता है।
- रचना विशेष के तैयार होते समय इसमें शामिल गायक या वादक भी नहीं बता सकता कि अंत में क्या होने वाला है।
- इस प्रकार पूर्व चिंतित या पूर्व अवधारित होने की बजाय यह एक आशु-उपज (on-spot creation) होता है।

यह फ्यूज़न की चमत्कारी मिसाल है।

हमारे यहाँ फ्यूज़न से स्थानीय सांगीतिक शास्त्रीयता खोने या प्रभावित होकर उसके वर्ण-शंकर हो जाने का भय भारतीय संगीत-फलक पर प्रकट होते रहता है।

शुभा मुद्गल के आलेखानुसार पं. रविशंकर ने तो इसे पीटर लैवेन्जोली के साक्षात्कार में स्पष्ट नकारा है। विश्व के शिखर संगीतकारों, येहुदी मेनुहिन, जीन पियरे रामपाल तथा कई अन्य के साथ अपनी जुगलबंदियों को उन्होंने कोलेबॅरेशन (सहयोग, सहभागिता) कहा ना कि फ्यूज़न। बाद में पंडित जी के साथ जुबीन मेहता की शानदार जुगलबंदी इस मायने में अलग थी कि इसमें जुबीन का ऑर्केस्ट्रा

Scanned with CamScanner

हमारे भारतीय शास्त्रीय वाद्य उपकरणों से बिलकुल अलग था, जो 'रागमाला' नाम से विश्व संगीत में पं. रविशंकर का मान्यता प्राप्त मील के पत्थर जैसा योगदान है। निस्संदेह 'रागमाला' का आधार 30 भारतीय शास्त्रीय राग थे पर यह फ्यूजन की शुरुआती भूमिका विश्लेषणात्मक अर्थों में मानी जा सकती है।

इक्कीसवीं सदी के संगीत-विलयन (म्युजिक-फ्यूज़न) के सन्दर्भ में इस फेहरिस्त के बिना बात अधूरी रहेगी। नयी पीढी के चहेते गायक लोकसंगीत की माटी से पैदा कैलाश खेर, पं. शिवकुमार शर्मा की संतूरी आभा से जगमगाते उनके सुपुत्र राहुल शर्मा, वैश्विक संगीत के प्रखर नक्षत्र कर्ष काले, गहरे समर्पण की चित्त वृत्ति वाली कीर्तनकार जया लक्ष्मी और अन्यान्य। ये सभी संगीत के फ्यूज़नी हस्ताक्षर हैं।

इन सबकी हस्ताक्षरी उपस्थिति और सक्रियता फ्यूज़न के समर्थन में एक साक्ष्य जैसा है जो प्रमेय सिद्धि की तरह निष्कर्ष निकालता है कि फ्यूज़न एक नैसर्गिक-सामाजिक प्रक्रिया है। यह घटना मनुष्य की अभिव्यक्ति की प्रत्येक दिशा और दशा में घटित होती है, चाहे अध्यात्म हो या विज्ञान, गीत या संगीत, गद्य या पद्य, करत या पढ़त सब-कुछ। इस पर निषेध समाज को एक पोखर बना देता है जो बहते जल का भागीदार नहीं होता। हमारा देश भी एक वनवास से वैश्विक रहवास में अभी अभी शामिल हुआ है और समय की मांग है कि हम अपनी वंशानुगतता को पर्यावरण की हमजोली बना लें। बंद पुड़िया में तो सालोंसाल छिपे रहे अब दुनिया के खुले लिफ़ाफ़े में रहने का वक़्त है ताकि दुनिया हमें पढ़े और हम दुनिया को।

यह ऐसा समय है कि वर्तमान कुरुक्षेत्र में यदि कृष्ण संसार के रहस्य से पुन: पर्दा उठाने के लिए अर्जुन के समक्ष दिव्य दृष्टि प्रदान करने हेतु उद्यत हो और अर्जुन की समर भूमि कुरुक्षेत्र की स्मृति भी कायम रहे तो वह कहेगा-

''प्रभो, क्षमा करें, आज ऐसी दृष्टि चाहिए जो विराट के साथ सूक्ष्म का भी अवलोकन कर सके। आपको भी विराट के साथ-साथ अपना सूक्ष्म रूप भी प्रकट करना होगा ताकि मैं सृष्टि को सर्वांग निहार सकूं, उस काल का वह दर्शन आज सम्यक तो नहीं है, केशव।''

समसामयिक प्रश्नों की जटिलता और गंभीरता के परिप्रेक्ष्य में, स्यात; सम्पूर्णावतार कृष्ण इस प्रश्न का अवसर ही ना दे अर्जुन को और पूछने के पूर्व ही उसे उसकी चाही गयी दिव्य दृष्टि से सज्ज कर दें।

अस्तु

- लक्ष्मीकांत जवणे
laxmikantjawney@gmail.com
M- 099936 22228

पत्रिका ही नहीं, एक रचनात्मक अनुष्ठान

पत्रिका मुफ्त मांग कर, कृपया हमारे अनुष्ठान को आघात न पहुँचाएं

'कला समय' के सदस्य बनें- ❍ पत्रिका की वार्षिक/द्वैवार्षिक /आजीवन सदस्यता ग्रहण करें। सदस्यता शुल्क मनीआर्डर, ड्राफ्ट, ऑनलाइन अथवा व्यक्तिगत रूप से भुगतान किया जा सकता है।

'कला समय' की एजेंसी के नियम- ❍ आपके गांव, कस्बे, शहर में सांस्कृतिक पत्रिका 'कला समय' की एजेन्सी के लिए सम्पर्क करें। ❍ कम से कम दस प्रतियों से एजेन्सी शुरू की जायेगी। ❍ पत्रिका कुरियर अथवा रजिस्टर्ड बुक पोस्ट से भेजी जायेगी। डाक खर्च एजेन्सी को वहन करना होगा। ❍ कमीशन, प्रतियों की संख्या के आधार पर।

स्थायी तथा सम्पादकीय पता और दूरभाष क्रमांक के साथ सम्पर्क करें- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 Email : bhanwarlalshrivas@gmail.com

लेखकों/कलाकारों से ❍ कला-संस्कृति के अछूते पहलुओं पर सर्जनात्मक, शोधात्मक और सूचनात्मक आलेख, टिप्पणियां, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, ललित निबन्ध, कविताएँ, छायाचित्र, रेखांकन तथा शोध आमंत्रित हैं। ❍ रचनाएँ कागज के एक ओर टाइप की हुई, अथवा सुवाच्य लिपि में अंकित हों। कृपया रचना के साथ पर्याप्त डाक टिकिट लगा लिफाफा भी संलग्न करें। रचनाएँ और चित्र ई-मेल से भी भेज सकते हैं।

प्राथमिकता के साथ : Chanakya फोंट / वर्ड फाइल / PDF फॉर्मेट में ही भेजें।

अनुरोध : वे सदस्य जिनका वार्षिक / द्विवार्षिक सदस्यता शुल्क समाप्त हो रहा है, कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करायें।

Scanned with CamScanner

साक्षात्कार

(युवा सितार वादक असद खान से विनोद नागर की बातचीत)

फ़्यूजन से भारतीय संगीत को कोई नुकसान नहीं

मेवाती घराने की परम्परा को आगे बढ़ाने वाले युवा सितार वादक असद खान बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं. बचपन से अपने पिता मशहूर सितार वादक उस्ताद सिराज खान को सितार बजाते देख महज छह साल की उम्र में बालक असद का झुकाव संगीत की ओर होना स्वाभाविक ही था. छह साल की नन्ही उम्र में शौकिया तौर पर सितार बजाने लगे बालक असद ने नौ- दस वर्ष के होने पर सितार से अच्छा तादात्म्य बना लिया था अगले कुछ ही अरसे में वो गुरु-शिष्य परम्परा का निर्वाह करते हुए अपने पिता के गंडाबंद शागिर्द बन चुके थे. वो निर्णय लेने का समय था और आज एक वो दौर है जब संगीत रसिकों की तालियों की गड़गड़ाहट के बीच देखते ही देखते पिता-पुत्र की जोड़ी सितार पर जुगलबंदी से सुरीले संगीत का समां बांध देती है. 'कला समय' के पिछले अंक में आपने उस्ताद सिराज खान से हुई बातचीत पढ़ी. इस अंक में प्रस्तुत है श्री असद खान से की गई बातचीत के अंश-

- विनोद नागर
वरिष्ठ लेखक तथा धारदार फिल्म समीक्षक। आकाशवाणी-दूरदर्शन में रीजनल न्यूज हेड रहे हैं।

- **सितार वादन के खानदानी पेशे में आने की पृष्ठभूमि क्या रही.. ?**

– मुझे घर से यह छूट मिली हुई थी कि मैं जीवन में आगे जो करना चाहता हूँ वह करूँ. मुझ पर यह कभी लादा नहीं गया कि मै मेवाती घराने की छठी पीढ़ी का सदस्य हूँ तो मुझे इस फील्ड में आना ही चाहिए. पिताजी ने मुझे पूरी आज़ादी दे रखी थी कि मैं डॉक्टर/ इंजीनियर/ वकील या कुछ और बनना चाहूँ तो ज़रूर उस दिशा में आगे बढ़ूँ लेकिन अपनी रूचि और क्षमता का स्वमूल्यांकन करने के बाद कोई फैसला करूँ. जीवन के उस महत्वपूर्ण पड़ाव पर सभी विकल्पों पर विचार कर मुझे यह समझ में आया कि मेरे घर में संगीत की विरासत को लेकर जो व्यापक अनुभव संसार विद्यमान है उससे इतर कोई और ज्ञान मुझे घर से नहीं मिल पाएगा. पिताजी भी यही चाहते थे कि यदि मन में संगीत के प्रति गहरी ललक हो तो ही मुझे इधर का रुख करना उचित होगा वर्ना घराने का नाम ख़राब मत होने देना.

- **मेवाती घराने की प्रतिष्ठा को आगे बढाने पर कितने संतोष और गर्व की अनुभूति होती है.. ?**

– सच पूछिये तो गर्व से ज्यादा डर लगता है कि इस मुकाम पर पहुँचने के बाद भूल से भी कहीं कोई चूक न हो जाए.. कोई कमी न रह जाए. विश्व के लब्ध प्रतिष्ठ बर्लिन सिम्फनी ऑर्केस्ट्रा में अपनी प्रस्तुति के दौरान पूरे समय इस बात का अहसास बना रहा कि पंडित रविशंकरजी ने जो विराट महिमा सितार वादन को पूरी दुनिया में दिलाई है बस उसका मान बना रहे. तो उस लिहाज से ये डर बेतकल्लुफी से समझदारी की ओर ले जाते दायित्वबोध का ही है.

- **शास्त्रीय संगीत का मंच साझा करते हुए आप दोनों (पिता-पुत्र की जोड़ी) की लयात्मक रिदम और कलात्मक केमेस्ट्री को ऑडियंस आसानी से महसूस करते हैं.. उस्ताद के साथ बराबरी में सितार बजाते हुए कोई दबाव महसूस नहीं होता.. ?**

– एक भावनात्मक दबाव तो रहता है कि इस वक़्त आप अपने पिता और गुरु के साथ बजा रहे हैं.. साथ नहीं बल्कि मै कहूँगा कि उनके पीछे बजा रहे हैं. अब रही बात आपसी तादात्म्य की तो ये समझ लीजिये कि उस संगीत सभा में उपस्थित श्रोताओं के लिए दो कलाकार तन्मय होकर उस राग की सेवा कर रहे होते हैं. राग की शुद्धता भी बनी रहे.. अदब भी बना रहे.. श्रोताओं का मनोरंजन भी होता रहे, यही कोशिश रहती

Scanned with CamScanner

है हमारी पिता और पुत्र के रूप में कह लीजिये चाहे उस्ताद और शागिर्द के रूप में. प्रस्तुति के दौरान आलाप और जोड़ झाला के दरम्यान कई बार हमें एक दूसरे को सपोर्ट करना होता है तो कई बार श्रोताओं का आनंद बढाने के लिए एक दूसरे को उतार-चढ़ाव की चुनौती भी देनी पड़ती है. कुल मिलाकर ऐसे हर उपक्रम की मंशा प्रस्तुति को आल्हादकारी बनाने की होती है. यह हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत की एक बड़ी खूबसूरती भी है.

- **संगीत में फ़्यूजन के बढ़ते चलन को किस नज़रिए से देखते हैं.. ?**

– फ़्यूजन म्यूजिक अपने आप में एक खूबसूरत एक्सपेरिमेंट रहा है. हमारे ट्रेडिशनल म्यूजिक और साजों के साथ करने पर एक नया ही सांगीतिक स्वरुप उभरकर सामने आया है इसमें कोई शक नहीं. फ़्यूजन म्यूजिक हमारे यहाँ ही नहीं पूरी दुनिया में चलता आया है. वायलिन पर हो रहा है.. हारमोनियम पर.. ऑर्गन पर.. सिन्थेसाईजर पर हुआ है. लेकिन भारतीय संगीत और वाद्ययंत्रों के साथ जो प्रयोग हुए हैं उसने पूरी दुनिया में फ़्यूजन म्यूजिक की काया पलट दी है. अब चूँकि इसमें कोई ज्यादा बंधन तो होते नहीं हैं राग बिहाग की तरह कि भई ये करिए और ऐसा मत करिए इसलिए आपको बंधकर काम करना है लेकिन खुले वातावरण में. ज़ाहिर है फ़्यूजन एक्सपेरिमेंटल म्यूजिक है तो वो अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी.

- **क्या इस प्रयोगधर्मिता से भारतीय संगीत को नुकसान पहुँचने की आशंका तो नहीं.. ?**

– नहीं.. नहीं.. मुझे कभी ऐसा नहीं लगा. भारतीय संगीत को फ़्यूजन तो दूर किसी भी चीज़ से नुकसान नहीं पहुंचेगा. फ़्यूजन से ज्यादा रिस्क अगर कोई हो सकता था शास्त्रीय संगीत के लिए तो वह फिल्म संगीत था. मगर जब उससे ही कोई फ़र्क नहीं पड़ा तो इस तरह की बातों का कोई मतलब नहीं है. अब एक्सपेरिमेंट करनेवाला तो अपनी धुन में कुछ भी करेगा.. करता रहे. मैंने सुना है कि अभी कुछ लोग छोटे-छोटे नए साज बनाकर बजाने लगे हैं. अपने मन का करने के लिए स्वतंत्र हैं लोग. मैं आपको आज की ही बात बताता हूँ. आज मैं उस्ताद अमजद अली खां साहब का एक इंटरव्यू बड़े गौर से देख रहा था जिसमे वे अपने साज के बारे में बात कर रहे थे. जब उन्होंने अपना सरोद बताया तो मुझे ऐसा नहीं लगा कि उन्होंने अपने साज के साथ कोई प्रयोग किया हो.. या कोई नया तार भी अपने हिसाब से लगाया हो. तब मुझे इस बात का इल्म हुआ कि देखिये सरोद के मूल स्वरुप को बनाए रखकर उन्होंने इतना नाम कर लिया और दुनिया नए साज बनाने में लगी है. ■

-------0-------

जब हम अच्छा खाने, अच्छा पहनने
और अच्छा दिखने में खर्च करते हैं
तो अच्छा पढ़ने-लिखने और सोचने-समझने
की खुराक में खर्च क्यों न करें !

प्रबंध संपादक
कला समय

सम्पर्क- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com / bhanwarlalshrivas@gmail.com

Scanned with CamScanner

आलेख

भारतीय कला दृष्टि : परिक्रमा नहीं यात्रा

– **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय**

कला यदि संवाद है तो रूप उसकी भाषा! यह रूप जब रंगों और रेखाओं के माध्यम से लकड़ी, लोहे, तांबे, कांसे या पत्थर को तराशकर उनसे बने शिल्पों या उत्कीर्णनों के माध्यम से आँखों के सामने उतरता है तो यह रूप कलाकार की उस अदृश्य चेतना की परिणति होता है, जो घनीभूत हो अभिव्यक्त होने को आतुर हो उठती है। चित्र या शिल्प भी ठीक उसी तरह चित्रित होते या ढलते हैं जिस तरह कविता और यही वजह है कि अपनी कृति के बारे में जो दृष्टि कलाकार की होती है, वह कला समीक्षक की नहीं होती। सृजन बिल्कुल अलग है और सृजन को परखने की कोशिश बिल्कुल अलग। लेकिन भारतीय कला दृष्टि के संदर्भ में यह तथ्य विद्यमान है कि भारतीय मनीषियों ने उन बिंदुओं की तलाश की है, जहाँ कलाकार और कला समीक्षक, दोनों के दृष्टि धरातल समानता रखते हैं।

इनमें पहला धरातल है रस और दूसरा है आनंद। तैत्तरीय उपनिषद् में जिस 'रसौ वैस:' का उद्घोष हुआ, उसकी निरंतरता प्रत्येक युग में बरकरार रही। माघ हों, भारवि हों या कालिदास हों, इन सभी ने रस और आनंद को अपने कृतित्व में बड़े स्वाभाविक रूप में प्रतिष्ठित किया और इसी प्रतिष्ठा को उपनिषद्कार से लेकर रूप गोस्वामी तक ने अपनी कसौटियों पर खरा पाया। यहाँ यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि आधुनिक युग में डॉ. रामविलास शर्मा जैसे वामपंथी मनीषियों ने भी कला और सौंदर्य के संदर्भ में आनंद तत्व को सर्वाधिक प्रतिष्ठा दी।

भारतीय कला दृष्टि का एक और महत्वपूर्ण धरातल है और वह है समग्रता की पहचान। समग्रता की यह पहचान हमारे रागबोध और सौन्दर्य दृष्टि दोनों में होती है, इसीलिए कि चाहे राग हो या सौन्दर्य भारतीय दर्शन के परिप्रेक्ष्य में दोनों का स्वभाग बंधनजयी है। हमारी दृश्यकला, किसी इतिहास या जातीय आधार की सीमा से बंधी नहीं है इसलिए यही बंधनहीन दृष्टि हमारी कला की सच्ची आख्याता है। भारतीय कलादृष्टि संबद्धता पर बल देती है वह अलग-अलग उपादानों के सौष्ठव पर नहीं। इस दृष्टि में केन्द्र पर बल नहीं है बल्कि केन्द्र की परिधि में आने वाले उस संपूर्ण संसार पर है जो विश्व का लघुरूप है। भारतीय कला दृष्टि एकांगी नहीं है वह केवल कलात्मक सरोकारों से नहीं जुड़ती बल्कि लोक से, राग से, रस से, सौन्दर्य से और जीवन के प्रत्येक व्यापार से जुड़ती है। वह इतनी सहज है कि हम लोक दृष्टि और कला दृष्टि में भेद नहीं कर सकते।

प्रख्यात संस्कृतिविद् डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने भारतीय कला की अवधारणा के संबंध में संस्कृत साहित्य का संदर्भ देते हुए लिखा है कि कला शब्द का प्रयोग लगभग 20 अर्थों में हुआ है। कला शब्द 'कल' से बना है, इसके कई अर्थ हैं। भेदना, खण्ड-खण्ड करना, प्रीतिकर करना। इन अर्थों की छाप कलित, कलम, कला, कलवा, कलिका, सकल, विकल, निष्फल जैसे शब्दों में पाई जा सकती है। कला का अर्थ है खण्ड, किन्तु ऐसा खण्ड जिसके बिना संपूर्ण अधूरा ही रहता है। एक तरह से कला संपूर्णता को मापने का पैमाना ही है, इसीलिए पूर्ण पुरुष श्रीकृष्ण को सोलह कलाओं वाला पुरुष कहाँ गया है।

वे मानते हैं कि कला की जीवन से अलग कोई स्थिति नहीं है और यही कारण है कि हमारे यहां कला, कला के लिए है या जीवन के लिए यह विवाद नहीं उठा। कला हमारे जीवन का रागात्मक संस्कार है। हमारे यहां कला जीवन के लिए है, अपने लिए नहीं है, वह जीवन में ओत-प्रोत है तथा उसके बिना जीवन अपना सहज छन्द नहीं पहचान पाता। उनके अनुसार भारतीय कला में धाराओं का आवेग और तटों जैसा संयम है। शरीर की सुन्दरता उसका मानदण्ड नहीं है बल्कि उसका मानदण्ड प्राणों के संधान से

Scanned with CamScanner

भरपूर होना है। खजुराहो के शिल्प ऐसे ही प्राणवान शिल्प हैं जिनमें बौद्धों के सहजिया सम्प्रदाय, शैवों के प्रत्यभिज्ञा दर्शन तथा वैष्णवों के मधुर भाव का ऐसा सुन्दर संयोग है जिसमें पूर्ण परितृप्ति है। यह भारतीय कला का तांत्रिक पक्ष है और इस दृष्टि से खजुराहो के शिल्प भारतीय कला के सच्चे प्रतिनिधि हैं। वे काम के मर्म की सर्वश्रेष्ठ व्याख्या और हमारे मौलिक जीवन व्यवहार की उत्कृष्ट नैतिक अभिव्यक्तियां हैं।

दूसरी ओर यदि कला के बारे में पाश्चात्य विद्वानों की धारणाओं पर गौर करें तो यह मालूम होगा कि इन विद्वानों ने कला को एक विशेष कोण से देखकर उसे दायरों में बांधने की कोशिश की है। क्रौचे का मानना है कि कला का लक्ष्य सौन्दर्य है जबकि हर्बर्ट रीड अपनी प्रसिद्ध पुस्तक फिलॉसॅफी ऑफ मॉडर्न आर्ट में कहते हैं कि आधुनिक कला इलस्ट्रेशन नहीं, इंटरप्रिटेशन है। वह व्याख्या है, कोरा चित्रण नहीं। वह प्रतिभा नहीं प्रतीक है। बामगार्टन (1714-62) ने कला को तीन भागों में बांटा, एक्टोटेलिक आर्ट, आटोटेलिक आर्ट तथा इण्डोटेलिक आर्ट। लेकिन कला के बारे में इस विभाजन से हटकर भी एक नई दृष्टि जन्मी, जिसे गिफ्सन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'दि म्यूजिक एण्ड थिंकर' में व्यक्त किया। उसने लिखा कि कला प्रकृति का अनुवाद है और अनुवाद जितना ही निकटतर होता है उतना ही श्रेष्ठतर होता है। कला प्रकृति के सौन्दर्य को प्रतिध्वनित करती है, लेकिन पश्चिम के ही एक कला समीक्षक बेर्नेर हाफ्टमैन ने कहा, ''अब मानव दृश्यमान को विशेष महत्व नहीं देता। उसके मन:पटल पर जो प्रतिमाएं उभरती हैं, उनका महत्व है। निसर्ग एक बहाना मात्र है और अब यह विचार जोर पकड़ रहा है कि निसर्ग या प्रकृति को कला से हटाया जा सकता है।''

यूनान के दार्शनिकों ने कला के संबंध में विस्तार से चिंतन किया। अरस्तू और प्लेटो के मतों में यद्यपि भिन्नता रही लेकिन सौंदर्य की अनुभूति के धरातल पर इन विचारकों की धारणाएँ समान थीं। सौंदर्य की अनुभूति के धरातल पर इन विचारकों की धारणाएँ समान थीं। सौंदर्य को परमात्मा की हस्तलिपि कहा गया और अमेरिकी दार्शनिक सान्तियाना ने कहा कि सौंदर्य देखने वालों की दृष्टि में होता है वस्तु में नहीं। एक और जहाँ काण्ट, रस्किन, शिलर और हीगल जैसे विचारकों ने सौंदर्य को आत्मा की ऐन्द्रीय अभिव्यक्ति माना, वहीं दूसरी ओर हेचेसन तथा एलीसन जैसे चिंतकों ने सौंदर्य को सहचर के रूप में देखा। फ्रायड ने सौंदर्य को कामप्रेरित इन्द्रियजनित अनुभूति माना तो मार्क्स ने सौंदर्य के जन्म का आधार भौतिक अनुभूति के रूप में स्वीकार किया। फ्रायड और मार्क्स के मत के विपरीत इमर्सन, टॉलस्टाय, कॉलिंगवुड और हर्बर्ट जैसे विचारकों ने सौंदर्य को आंतरिक अनुभूति के रूप में मान्यता दी।

यह सिलसिला निरन्तर जारी रहा और बीसवीं शताब्दी के आते-आते कला के अनेक वाद जन्म गए। जैसे- प्रभाववाद, प्रतीकवाद, प्रगतिवाद, अतियथार्थवाद, क्यूबिज्म, फ्यूबिज़्म, फ्यूचरिज्म और अंत में अमूर्तकला तथा अस्तित्ववादी कला एक नई रूपरेखा लेकर कला जगत में उतरे। कला के इतिहास में पुर्नजागरण काल के महान सर्जक लियोनार्दो दि विंशी का यह कथन बहुत महत्वपूर्ण है कि ''कलाकार कला में किसी की अनुकृति नहीं करता वह उसका सृजन करता है, यह सृजन ही कला की आत्मा है।''

देरिदा के विखण्डनवादी दर्शन में इस सृजन की संभावना नहीं है। देरिदा का विखण्डनवाद अंतिम रूप से कला के उस सर्जनात्मक स्वरूप को नष्ट करता है, जिस स्वरूप के कारण आज तक कला की पहचान बनी हुई है।

वामपंथी चिन्तकों ने श्रम विभाजन को कला के उद्भव और परवर्ती विकास का मूलाधार माना, लेकिन परंपरागत भारतीय कलादृष्टि का विस्तार अपूर्व है। भारतीय कला दृष्टि में श्रम का सौन्दर्य तो है ही साथ ही उस यथार्थ का भी चित्रण है, जिसमें हूबहूपन नहीं है, निजता नहीं है अपितु जीवंत वास्तविकता है। इस दृष्टि में आकाशबौर का कहीं स्थान नहीं है, यदि कल्पना है तो वह भी इतनी सजीव कि वह जीवन का, उसके व्यापारों का अंग दिखाई देती है। शकुंतला का सौन्दर्य, श्रम से उद्भूत सौन्दर्य है और प्रकृति के उपादान इतने जीवन से भरपूर कि वे हमारे अस्तित्व में प्राणों का संचार करते हैं। यह भारतीय कला दृष्टि क्षितिज की तरह अपरिमित है तथा वह देह और गेह दोनों को अपनी परिधि में समेटती है।

देह और गेह के उजास से भरपूर हो जाने को भारतीय दृष्टि सौन्दर्य की परिणति मानती रही है। ''आत्मिक सौन्दर्य'' का प्रतिष्ठा गान सदियों से हमारे वाङ्मय में होता रहा है। यह दृष्टि वर्ग भेद नहीं मानती। ऐसा नहीं है कि सौन्दर्य दर्शन के विद्वानों या आभिजात्य वर्ग तक ही यह दृष्टि सीमित रही हो। वास्तविकता तो यह है कि इस दृष्टि का विकास लोकचेतना के माध्यम से हुआ और इस लोकचेतना की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि यह निजस्व से मुक्त थी। निजता से मुक्त होने के कारण यह मुखर बनी। निजस्व की संकीर्णता से मुक्त होने का सबसे बड़ा कारण यह था कि इसके संस्कारों में ही यह उदारता विद्यमान थी। ऋग्वेद में, आदि ऋषि ने गाया-

यो वो वृताभ्यो अकृणोद् लोकम् (4/17/176)

अर्थात् जिसने आपको घेरों से बाहर कर खुले स्थान को राहत दी। घेरों से बाहर बने रहने का यही संस्कार भारतीय लोकमानस की उदारता का मूल स्वर बना और घेरों में बंधे रहने की संकीर्णता, उजास के अबाध आगमन में कभी बाधा नहीं बनी। सुन्दरता के स्वरूप को इसी चेतना ने आकार भी दिया और संवारा भी। इसका बड़ा प्रमाण यह है कि हमारे समूचे लोक साहित्य में सुन्दरता के अगणित नैसर्गिक बिम्ब बिखरे पड़े हैं। एक उदाहरण

Scanned with CamScanner

निमाड़ी के एक प्रसिद्ध लोकगीत का है, जिसकी कुछ पंक्तियाँ हैं-

शुक्र को तारो रे ईश्वर उंगी रहयो।
तेकी मखऽ टीकी घड़ाव।।
ध्रुव की बादळ्ई रे ईश्वर तुली रही।
तेकी मखऽ तहबोळ रंगाव।

नव वधु अपने पति से आग्रह करती है कि जो आकाश में सबसे तेजस्वी शुक्र तारा चमक रहा है न उसकी मुझे बिन्दी घड़ा दो और यह जो ध्रुव की ओर उत्तर में बरसने योग्य बदली छायी हुई है उसकी मुझे चूनर रंगवा दो। इसी गीत में नायिका आग्रह करती है कि कड़कने वाली बिजली की मगजी उसमें लगवा दें और अंत में अपने पति से उसकी मनुहार है कि यह जो इठलाता और बलखाता हुआ वासुकी नाग दिखाई दे रहा है उसे वेणी गुंथवा दी जाए। इन पंक्तियों में कल्पना के सीमाहीन विस्तार तथा उसमें समाए, राग और रस का सहज अनुभव किया जा सकता है।

भारतीय कला दृष्टि की आत्मा उसकी सौन्दर्य दृष्टि है जिसका स्वभाव ही यह है कि वह बंधती नहीं। वह तो बांध लेती है। जब वह बांधती है तो फिर परिभाषाएँ गौंण हो जाती है। उसका बांध लेना ही अपने आपमें सौन्दर्य के सारे प्रतिमानों को परिभाषित कर देता है। हुआ यह है कला और साहित्य के अनुशासन अलग-अलग कर दिए गए और इनके बीच का संवाद प्राय: समाप्त हो गया।

भारतीय दृष्टि, सौन्दर्य को अनुपातों या पैमानों के मार्फत नहीं निहारती। उसके पास सौन्दर्य को मापने के इतने पैमाने हैं कि वे पैमाने ही बेमानी हो जाते हैं। भारतीय दृष्टि में सौन्दर्य बंधनजयी और सीमातीत है।

वेदों से निकली यह परम्परा निरन्तर विकसित होती रही। उपनिषदकाल में सौन्दर्य में आनंद तत्व की प्रतिष्ठा हुई। तैत्तरीय उपनिषद में 'रसौ वै स:' कहकर इस तथ्व की व्याख्या की गई। कठोपनिषद् और मुण्डकोपनिषद् में भी उदाहरणों के द्वारा सौन्दर्य को शब्दों में बांधा गया। कठोपनिषद् में कहा गया कि रूप का धर्म है प्रतिबिम्बित होना, कल्पित होना, छन्दित होना और छायातप में प्रकट होना। मुण्डकोपनिषद् में इसे इस तरह समझाया गया कि दो सुन्दर चिड़िया सफेद और काली, जागती और सोती, छायातप की तरह एक साथ रह रही हैं। एक चिड़िया फल चख रही है, गा रही है, दूसरी चुपचाप बैठी देख रही है। आगे के समय में विष्णुधर्मोत्तर पुराण और विद्यारण्य मुनि के पंचदशी के चित्रदीप प्रकरण में सौन्दर्य को विस्तार से परिभाषित किया गया।

भारतीय वाङ्मय के ग्रंथों में सौन्दर्य के बारे में निरन्तर विचार आते रहे और इस यात्रा ने कभी विराम नहीं लिया। भारतीय सौन्दर्य दृष्टि को बड़े व्यापक परिप्रेक्ष्य में भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में स्थापित किया। भरत ने स्थापित किया कि भारतीय चेतना अनुपात को गौण मानते हुए सौन्दर्य के मूल में रस को ही ग्रहण करती है। भरत ने सौन्दर्य को रहस्यात्मक नहीं रहने दिया बल्कि उसे मामूली से मामूली आदमी से जोड़ दिया। भरत ने पहली बार सौन्दर्य के मनोविज्ञान को समझने की चेष्टा की। सौन्दर्य की इस भारतीय दृष्टि की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वह बड़ी उदार थी। सौन्दर्य लोकमंगल से जुड़ा था। सुन्दरता का अर्थ सिर्फ उसे निहारकर अपने को आनंदित करने तक सीमित नहीं था। कालिदास ने कुमारसंभव में लिखा कि जिस रूप का व्यवहार उमा ने किया वह रूप के गर्व का व्यवहार था इसलिए वह शिव को रिझा नहीं पाया।

भारतीय कला दृष्टि के आधुनिक युग में महान आख्याता हुए कलाऋषि डॉ. आनन्द कुमार स्वामी। उनकी कृति 'डांस ऑफ शिवा' भारतीय कला अवधारणा के परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करती है। उनके मत में भारतीय कला दृष्टि एक नई उद्भावना है। वह चिरनवीन है और यह नवीनता नवीन बनाने में नहीं, नवीन बने रहने में है। भारतीय कला यह निरंतर स्मरण कराती है कि मनोरमता की आत्मा कभी कलुषित नहीं हो सकती। इस दृष्टि का विश्वास यह है कि यहां सब कुछ एक-दूसरे से गुंथा हुआ है जिसमें रस ने अपने प्राणों के प्रतिष्ठा की है। वह सबका है, किसी एक का, है ही नहीं। भारतीय कलाकार का उद्देश्य भी यही रहा है कि जहां-जहां रिक्तता दिखाई दे, खालीपन हो उसे वह भरता रहे। भरने की यही आकांक्षा भारतीय कला दृष्टि की पर्याय है और यही सच्ची सुन्दरता है। यह सुन्दरता अनुभूतिपरक और सहज है जिसे माघ और भारवि सहज मानते हैं। इसकी संपूर्णता '**सत्यम् शिवम् सुन्दरम्**' में है। वह गति को चित्रित करती है, हूबहू नकल नहीं करती। भारतीय कला आदर्श सौन्दर्य का वक्तव्य है और आदर्श सौन्दर्य स्थिर नहीं, परिवर्तनशील है। माघ यही करते हैं ''**क्षणे क्षणे यन्नवत्तामुमैति तदेव रूपं रमणीय तायाः।**''

यहां यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि भारत में कला के नाम व्यक्ति पर नहीं है। यहां चन्द्रगुप्त, अशोक या पुष्यमित्र के नाम पर कला नहीं है। वह गुप्त है कुषाण है, शुंग कला है। यहां व्यक्ति महत्वपूर्ण है ही नहीं बल्कि उसकी व्यंजना महत्वपूर्ण है। भारतीय कला दृष्टि में निरी वास्तविकता के अंकन पर बल नहीं है। यहां कला वर्तनी नहीं है बल्कि कला व्यापक वास्तविकता की तलाश करती है। यदि कमल को ऐसे रूप में उकेरा जाए कि उससे पूरी सृष्टि का प्रतिरूप उभर आए तो कमल का वही यथार्थ है।

सौन्दर्य की यही अवधारणा भारतीय कला दृष्टि का मूल स्वर है। निरन्तर परिवर्तनशील, रस और आनन्द से परिपूर्ण सौन्दर्य, सार्थक सौन्दर्य है। इसे न किसी बंधन में बांध सकते हैं, न सांचे में ढाल सकते हैं, न किसी विशिष्ट आकार में शिल्पित कर सकते हैं, न रंगों और रेखाओं में सहेज कर उसे परिभाषित कर सकते हैं।

Scanned with CamScanner

भारतीय कला दर्शन की परम्परा में सौन्दर्य बोध का अर्थ सिर्फ देह तक या सज्जा तक कभी सीमित नहीं रहा। यहां सौन्दर्य में अनुपात के बजाय लावण्य की प्रतिष्ठा पर जोर दिया गया। लावण्य वह होता है जो अंदर की दीप्ति को देह के माध्यम से बाहर उजागर करता है। इसीलिए जब कभी दैहिक सौन्दर्य को अभिव्यक्त करने का प्रश्न उपस्थित हुआ तब महाकवि को दीपशिखा से अधिक उपयुक्त कोई उपमा नहीं लगी। रघुवंशम् में कालिदास का वह प्रसिद्ध श्लोक है, जिसके कारण उनका नाम दीपशिखा रखा गया, श्लोक है-

''संचारिणी दीपशिखैव राजो यं यं व्यतीयाय पतिंवरासा,
नरेन्द्र मार्गाट्ट इव प्रपैदे विवर्णभावं स स भूमि पालः।''

चलती, संचरित होती दीपशिखा से उस नायिका की तुलना की गई है जो अपने स्वयंवर के समय हर नरेश के आगे जाकर जब खड़ी हो जाती है तो उसकी दीप्ति से उसका मुखमण्डल जगमगा जाता है और ज्यों ही वह माला लिए उसके आगे से बढ़ जाती है, वह विवर्ण हो जाता है।

इस दृष्टि से यदि हमारी कला परम्परा में निर्मित भव्य मंदिरों की सरणियों, शिल्पों और मनोरम चित्रोंकनों को देखें तो यह बंधनजयी सौन्दर्य दृष्टि कितनी असीम है इसका अनुमान हो जाता है। दक्षिण भारत के विशाल मंदिरों के विलक्षण स्थापत्य को देखें, एलोरा के दिव्य कैलाश मंदिर के दर्शन करें या कोणार्क व खजुराहो के मंदिरों की भित्तियों पर शिल्पित लोच से भरपूर नायिकाओं पर दृष्टिपात करें, दीदीरगंज की यक्षी, ग्वालियर संग्रहालय में रखी विश्वविख्यात ग्यारपुर की शालभंजिका और सांची के तोरण द्वारों पर उत्कीर्णित सुरसुंदरियों, शालभंजिकाओं, चोलकालीन शिल्पों तथा किशनगढ़, मेवाड़ और कांगड़ा तथा बसोहली शैलियों में चित्रित लघुचित्रों को निहारें तो इस बंधन से परे, क्षितिज के समान फैले सौन्दर्य से हमारी आंखों का सहज साक्षात्कार हो जाता है।

वास्तव में कला आँखों का वह उत्सव है जिसमें जीवन के यथार्थ के साथ-साथ यह भी मनाया जाता दिखाई देता है कि जीवन कैसा होना चाहिए? कला मानस के उल्लास और विषाद् की अनायास होने वाली सहज अभिव्यक्त है। वह दूब की तरह मन में उगती है, उसे रोपा नहीं जा सकता। रोप देना कलात्मक नहीं है, मनोभूमि इतनी उर्वर हो कि सहज कुछ उग आएं, वही कला है। भारतीय कला दृष्टि अनुरक्ति से भरपूर सहज अभिव्यक्ति की पर्याय है। वहां आरोपण या निरुपण नहीं है अपितु स्वाभाविक रूप से सौन्दर्य की उद्भावना है।

संवरना कला नहीं है। अपने आप सँवरे हुए दिखाई पड़ जाना कला है। सोलह कलाओं वाले कृष्ण साँवरे हैं। इसीलिए कि वे सँवारे ही नहीं जा सकते। जैसे भी दिखें सँवरे हुए दीख पड़ते हैं। रास में नाचने वाले कृष्ण जितने सँवरे हुए दिखाई देते हैं, उतने ही सँवरे वे तब भी दिखाई देते हैं जब अपना प्रण तोड़कर वे भीष्म को कुरूक्षेत्र के रण में रथ का चक्का उठाकर अस्त-व्यस्त अवस्था में आहत करने के लिए तत्पर हो उठते हैं। उनका यही रूप अपने अंतिम समय में भीष्म की आँखों में बसा रहता है।

भारतीय कला का एक और महत्वपूर्ण तत्व है जिसे खजुराहो के मान्मथ शिल्पों के माध्यम से समझा जा सकता है और वह है आसक्ति के बीच अनासक्ति को छूने का चरम भाव। इन शिल्पों का यही संदेश है कि आसक्ति से होकर अनासक्ति की राह जाती है। बिना आसक्ति के अनासक्ति नहीं हो सकती।

भारतीय कला दृष्टि की एक और महत्वपूर्ण विशेषता है साझीदारी। वह अंतरावलंबन की प्रतिनिधि है। साझीदारी होती है तो संवाद के पुल बनते हैं और विमर्श के पथ प्रशस्त होते हैं। यही कारण है कि भारतीय कला परम्परा की यात्रा अप्रतिहत बनी रही। यह यात्रा कभी खंडित नहीं हुई। संवादहीनता वहां उत्पन्न होती है जहां निजस्व हो, अपने आप से मुक्त न हो पाना हो। पश्चिम की कला दृष्टि में यह निजस्व है जबकि हमारे यहां साहचर्य का भाव है।

हमारी मध्यकाल की विभिन्न चित्रशैलियों में वाल्मीकि की रामायण, कालिदास के काव्य, सूर के पद, केशव की कविप्रिया और रसिकप्रिया, बिहारी के दोहे और मतिराम के रसराज के प्रसंग रंगों और रेखाओं के माध्यम से उकेरे गए हैं किन्तु हमारे साहित्य मनीषी इन चित्रों के संबंध में नहीं जानते और न ही कला समीक्षक इस साहित्य की आत्मा से परिचित हैं। यही कारण है कि भारतीय कला की समग्र दृष्टि अपनी व्यंजना में हमारे बीच

Scanned with CamScanner

प्राय: अनुपस्थित है।

भारतीय कला दृष्टि की परम्परा में रूप के अनेक प्रतिमान हैं। इनमें सीता, राधा और शकुन्तला के प्रतिमान प्रमुख हैं। माता सीता का सौन्दर्य दैवीय सौन्दर्य है। उनके दैहिक सौन्दर्य के वर्णन पर किसी कवि का ध्यान नहीं है। यदि ध्यान है तो उनके करुणा, शील, पवित्रता और समर्पण के उन गुणों पर जिन्हें समन्वित कर देने से माता सीता की उज्ज्वल छवि उभर आती है।

राधा का रूप भारतीय सौन्दर्य दृष्टि का निकष है। वे श्रीकृष्ण की सोलहवीं कला हैं, अमृता हैं और अपने को मिटाकर विराट का ऐसा वरण हैं कि उनके मिटने में उनका सच्चा रूप झिलमिला उठता है। राधा का रूप सौन्दर्य भारतीय सौन्दर्य दृष्टि का आदर्श प्रतिमान है। उनका रूप अपने आप में सौन्दर्य है इसलिए सौष्ठव के जो अंकन राधा के हैं वे कलाकारों ने इतने समर्पण भाव से चित्रित किए हैं कि वे सौन्दर्य के अंकन नहीं रह गए बल्कि उनमें सौन्दर्य का राधांकन हुआ है।

शकुंतला का सौन्दर्य श्रम से उपजा और निसर्ग के बीच पल्लवित हुआ सौन्दर्य है। उनका रूप उनके आसपास की वन्य शोभा से उभरता है। कालिदास शकुंतला के रूप के बारे में कहते हैं कि वह बिना सूंघा हुआ पुष्प, नखों से अछूता पत्ता, बिना बिंधा हुआ रत्न, बिना चखा हुआ नूतन मधु और बिना भोगा हुआ पुण्यों और सत्कर्मों का फल है। यह रूप श्रम से आया है और उसके माथे पर छलकते हुए स्वेद बिन्दु ही उसके रूप के अलंकार बन गए हैं।

भारतीय कला में प्रतीक बड़े महत्वपूर्ण हैं। प्रख्यात संस्कृतिविद् डॉ. रामानंद तिवारी कहते हैं कि ''प्रतीकों के यह रूप जीवन के प्रत्येक अवसर पर नवीन उत्सव और आनंद के पर्व रचते हैं। हमारे सांस्कृतिक सौन्दर्य और भाव ने इन्हें अपने स्वरूप में इतना आत्मसात कर लिया है कि ये कलात्मक और दिव्य बन गए हैं।''

भारतीय कला का एक महत्वपूर्ण नैसर्गिक गुण स्वाभाविकता है। निजता इस स्वाभाविकता को समेटती है, जबकि समग्रता उसे विस्तार देती है। कला अव्यक्त और अदृश्य है। उसकी प्रतीति तभी होती है जब वह व्यक्त हो और दृश्यमान हो उठे। संगीत, चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य और इसी तरह की तमाम कलाओं में जो दिखाई देने वाली अभिव्यक्ति है, वह कला नहीं बल्कि कला की प्रस्तुति है। कला तो चेतना की उस प्राणशक्ति का नाम है जो अचेतन को चैतन्य बना देती है। कला ऐसा बंधनजयी संस्कार जिसे न तो शब्दजाल में गूँथा जा सकता है और न ही किसी विधान में बाँधा जा सकता हैं। माध्यम कला के साधन हैं। साध्य तो आनंद और रस के साथ-साथ उसकी अनुभूति है।

कला, समुद्र की अतल गहराई में स्थिर और निष्कम्प जल की तरह है। इसी निष्कम्प जल की मौन भंगिमा ही कला है। वह न तो रूप है, न रंग, न आकृति, न शिल्प, न तकनीक और न ही कोई कौशल। ये सब कला के ऊपरी आवरण हैं। वह मूलत: अपने अस्तित्व में निरावरण है, उसके पास कोई परिधान नहीं, अलंकरण नहीं, लालित्य नहीं, कुछ शोभन भी नहीं। उसका भाव निस्संगता का एकाकी भाव है। उसे किसी के साहचर्य की आकांक्षा नहीं है। कृति उस कलाकार की देन होती है जिसके मन में कला का यह निर्मल और एकाकी भाव बसा रहता है। कला के पास सृष्टि नहीं होती, सिर्फ दृष्टि होती है और उस दृष्टि को जो दृष्टा आत्मसात कर लेता है, वही कलाकार हो जाता है।

किसी वस्तु में सौन्दर्य को देख लेना कलात्मक व्यापार नहीं है। कलात्मक व्यापार है ऐसी दृष्टि दे देना जो सौंदर्य को देख सके। चित्र, मूर्ति और शिल्प, ये सब स्थिर दिखाई देते हैं, लेकिन वास्तव में ये कलाकार की दृष्टि के गतिशील प्रतिमान हैं। बिना गति के कला का कोई अर्थ नहीं है।

भारतीय सौन्दर्य दृष्टि ही वास्तव में भारतीय कला दृष्टि है। यही दृष्टि ललित कला के विभिन्न अनुशासनों का उत्स है।

भारतीय कला दृष्टि परिक्रमा नहीं यात्रा है। वह एक वृत्त में घूमकर पुन: वहां नहीं पहुंचती जहाँ से उसने परिक्रमा आरंभ की बल्कि वह जहाँ से अपनी यात्रा आरंभ करती है उसके पांव वहां वापिस नहीं लौटते बल्कि उस गंतव्य तक पहुंचने का संकल्प लिए अविराम चलते रहते हैं जिस गंतव्य तक पहुंचने का संकल्प उसने लिया है। भारतीय कला दृष्टि की यात्रा एक महान संकल्प की अनवरत् यात्रा है और यह संकल्प जब तक हमारे सृजन मूल्यों में प्रतिष्ठित रहेगा, भारतीय कला दृष्टि की यात्रा अविराम बनी रहेगी।

- 85, इन्दिरा गांधी नगर, आर.टी.ओ. कार्यालय के पास, केसरबाग रोड, इन्दौर-9 (म.प्र.) मो.-94250 92893

■

Scanned with CamScanner

संस्मरण

पद्मश्री स्वामी पागलदास जी महाराज के सानिध्य ने बदल डाला मुझे

- डॉ. संतोष नामदेव

बात 9 सितम्बर 1978 की है। जब मैं अयोध्याधाम के प्रमोदवन स्थित हनुमत विश्वकला संगीत आश्रम में सायं 5 बजे पहुँचा। लोहे का विशाल गेट जिस पर सबसे ऊपर ''जल मृदंग'' एवं नीचे संस्थापक का नाम एवं संगीत रत्नाकर, संगीत मकरंद के कुछ श्लोक लिखे थे।

पखावज और तबले की मिश्रित ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। डरते-डरते गेट के अन्दर घुसा तो अन्दर का वातावरण कुछ अलग ही लगा। एक 55-60 वर्ष के महान् पुरूष फूस की बनी झोपड़ी में अपने पास बैठे तबला वाद्य के विदेशी शिष्य को कुछ समझा रहे थे।

पास जाकर, सिर झुकाया अभिवादन किया और संकेत पाकर बैठ गया, थोड़ी देर बाद स्वामी जी ने मुझसे पूछा कहां से आये हो, क्या करते हो, क्या बात है ? ऐसे ही कई प्रश्न पूछने पर उत्तर पाकर उन्होंने बताया। मैं भी पखावज, तबला की सेवा करता हूँ और तुम्हारे जैसे गरीब, असहाय लड़कों को तबला, पखावज सिखाया करता हूँ। अभी-अभी आश्रम से कुछ शिष्य चले गये हैं। एक ये ही अमेरिकन शिष्य जो फुल ब्राइट एवार्ड लेकर आये हैं आश्रम में रह रहे हैं। कुछ शिष्य योग्य हो गये हैं और कुछ रियाज के डर से भाग गये हैं। अभी आश्रम में जगह खाली है, इतना सुनते ही मैंने निवेदन किया है कि आश्रम में मुझे भी स्वीकार कर तबला और पखावज सिखाने की कृपा करें। उन्होंने सहर्ष अनुमति दे दी और मुझे लेकर स्वयं दूसरी फूस की झोपड़ी में ले जाकर भोजन की तैयारी करने लगे। लगभग 10 बजे रात्रि में भोजन करके आश्रम में ही सो गया। सुबह लगभग 3 बजे पखावज की आवाज सुनाई पड़ी। पहले तो विश्वास ही न हुआ कि इतनी रात्रि में पखावज की आवाज कहाँ से आ रही है किन्तु थोड़ी देर में अपने को पूर्ण जागृत करके देखा तो स्वामी जी ही पखावज बजा रहे थे मैं उठकर स्वामी जी के सामने जाकर बैठ गया। उन्होंने बड़े प्यार से कहा-बेटा और सो जाओ, अभी 3 बजे हैं, 5 बजे आना। उनकी वात्सल्य भरी वाणी ने अन्तर्मन को हिला दिया। बिस्तर पर जाकर लेट तो गया, किन्तु नींद कहाँ। अनेकों कल्पनाएँ आने-जाने लगी, तब तक सुबह के 5 बज चुके थे। स्वामी जी ने आवाज लगाई तो झटके से उठकर उनके पास जाकर बैठ गया। उनकी आदत के अनुसार पखावज पर अँगुलियाँ घुमाते हुए अपनी दिनचर्या कहने लगे। जब से मैंने तबला पखावज सीखना प्रारम्भ किया था। 3 बजे ही उठकर अभ्यास करते आ रहा हूँ। 7 बजे तक एक कप चाय पीकर विद्यार्थियों को सिखाना प्रारम्भ कर देता हूँ, साथ में अपना भी अभ्यास करता रहता हूँ। प्राय: 10 बजे तक यही क्रम चलता है। फिर स्नान करके थोड़ी हनुमानजी (अपने इष्टदेव) की पूजा करता हूँ। 10.30 बजे बाजार की तरफ निकलकर बैंक, पोस्ट ऑफिस आदि ऑफिस के काम निपटाता हूँ, तब तक आश्रम में रहने वाले विद्यार्थी भोजन बना लेते हैं। जब कभी बैंक आदि का काम नहीं होते, तब मैं स्वयं बैठकर भोजन बना लेता हूँ। 12 बजे भोजन करके थोड़ा विश्राम करता हूँ और दोपहर के बाद पुन: अपना एवं विद्यार्थियों का अभ्यास करता कराता रहता हूँ। शाम को 7 बजे अभ्यास बन्द करके नित्य क्रिया से निपटकर सब्जी वगैरह बाजार से लाता हूँ और भोजन बना-खाकर विश्राम करता हूँ। बोलो इस दिनचर्या में ढल पाओगे। मैंने स्वीकृति में अपनी गर्दन हिला दी और आदेश पाकर नित्य क्रिया के लिये चला गया। नित्य क्रिया के बाद

Scanned with CamScanner

चाय पीते-पीते स्वामी जी आप बीती सुनाने लगे। आज से ठीक 45 वर्ष पूर्व मैं भी तुम्हारे जैसे अपने संगीत विहीन परिवार को छोड़कर भागा था, किन्तु दुर्भाग्यवश रेलगाड़ी में बिना टिकट एक टीटी के द्वारा पकड़ लिया गया। पूछताछ के बाद वह मुझे अपने घर ले गया। फिर क्या था टीटी ने अपने घर के सारे कार्य जैसे-बर्तन साफ करना, कपड़े धुलवाना, घर की सफाई करना आदि कामों में लगा दिया। लगातार 10 दिनों तक अथक परिश्रम के साथ अभी तक जो कार्य नहीं किये थे, सभी करने पड़े। 11 वें दिन टीटी महोदय के घर पर उपस्थित न रहने पर उनकी पत्नी ने 4 रूपये लेकर सब्जी के लिए बाजार भेजा। मैं ऐसे ही किसी मौके की तलाश में था। पैसे लेकर एक ट्रेन में जाकर बैठ गया। वाराणसी आकर रुका। एक-दो दिन इधर-उधर घूमा, सारे पैसे खर्च हो गये। भूखे-प्यासे फिर स्टेशन आया। चाय बेचने वाले से बातचीत की कुछ खाना माँगा। खाना खिलाने के बाद चाय वाले ने मुझे केतली पकड़ा दिया और कहा जैसे ये लड़के चाय बेचकर अपना पेट पाल रहे हैं, वैसे तुम्हें भी अपना पेट पालने के लिए मेरे यहाँ रहकर चाय बेचनी पड़ेगी। फ्री में तुम्हें कौन खिलायेगा। मरता क्या न करता। रातभर में दो रूपये की चाय बेची। सुबह अचानक मन में आया, क्या मैं चाय बेचने के उद्देश्य से घर से भागा था? दृढ़ निश्चय करके अयोध्या की ओर जाने वाली ट्रेन में चाय की केतली लेकर बैठ गया। दोपहर को अयोध्या में उतर गया, यहाँ चार-पाँच दिन तक तो केतली वगैरह बेचकर अपना पेट पालता रहा, परन्तु अब जब हाथ में पैसे न थे तो हनुमानगढ़ी का सहारा लिया, जब भूख लगती मंदिर पर जाकर प्रसाद लेकर, उसे खाकर पानी पी लेता, किन्तु यह क्रम भी ज्यादा समय तक न चल सका और एक दिन हनुमानगढ़ी के सागरिया पट्टी के महन्त रामकिशुन दास (बंगाली बाबा) के हाथों पकड़ा गया। उन्होंने पूछा-बेटा क्या बात है? क्या करते हो? कहाँ के रहने वाले हो? हनुमानगढ़ी के इतने चक्कर क्यों लगाते रहते हो? लगभग 20 दिन के बाद किसी ने इतने प्यार से पूछा था। मेरी दु:खभरी सुनकर उन्होंने अपना शिष्य बनाकर राम मंत्र की दीक्षा दे दी और साधु बना दिया। साधु साही टकसाल सिखा दिये। पहलवानी करने के लिये प्रेरित किया। मैं भी अखाड़े में जाकर दण्ड बैठकर लगाने लगा। फिर भी मन अयोध्या के भजन-कीर्तन में बहुत लगता। जहाँ कहाँ भी भण्डारा होता, रामायण गाई जाती, उसमें ढोलक, मजीरा अवश्य बजाता। उसी वर्ष हनुमानगढ़ी के नागापनी के उत्सव में मुझे नागा बना दिया गया। नागासाही ड्रेस पहनकर घूमने लगा।

उसी उत्सव में एक रामलीला पार्टी आयी हुई थी, उसमें तबला मास्टर के रूप में बाबू नेपाल सिंह जी आये थे, जो पटना (बिहार) के निवासी थे। उनका तबला वादन सुनकर मन किया बस इन्हीं से ही तबले की शिक्षा लेना चाहिए। रात में रामलीला खत्म होने के बाद उनसे निवेदन किया मैं मात्र तबला सीखने के लिये ही अपने घर से भागा हूँ और सारी आप बीती सुना दी। मेरी बातें के बाद उन्होंने बड़े सरल शब्दों में समझाया, बेटा मैं इसी रामलीला मण्डली के साथ ही घूमता रहता हूँ। यदि तुम मण्डली में ही रह सको तो मैं तुम्हें अवश्य ही तबला सिखा दूँगा। फिर क्या था दूसरे ही दिन अपने साधुसाही कपड़े लेकर मण्डली में भरती हो गया और उसी दिन से ही तबला सीखना प्रारम्भ कर दिया। पाँच वर्ष तक लगातार उनके साथ में रहकर रात में रामलीला के पात्रों(राम-सीता) का अभिनय करता और दिन में किसी पेड़ के नीचे तबला लेकर अभ्यास करता रहता। क्योंकि सभी रामलीला मंडली के सदस्य दिन में सोते थे, इसलिए मुझे कोई एकान्त जगह की खोज रहती। जब कभी रास्ते में होते ट्रेन का इंतजार करना पड़ता तो बस वहीं स्टेशन के प्रतीक्षालय में एक तरफ अपना तबला लेकर अभ्यास करने बैठ जाता। इस अभ्यास के क्रम में कभी-कभी मेरे चारों ओर काफी भीड़ इकट्ठी हो जाती और दो-दो, चार-चार पैसे फेंक देते। इस प्रकार मैंने पाँच वर्ष तक रामलीला मंडली में रहकर बाबू नेपाल सिंह जी से तबला सीखा। पाँच वर्ष बाद मंडली पुन: अयोध्या पहुँची। उस समय के प्रसिद्ध पखावजी रामलखन दास जी ने मुझे तबले पर से यह कहकर उठा दिया कि नवाह्न में तबला नहीं पखावज बजता है। उनकी यह

Scanned with CamScanner

बात मेरे मन में चुभ गयी, बस सोचने लगा पखावज किससे सीखा जाये, योग्य गुरु की खोज पुन: एक बार शुरू हुई, कहते हैं जहाँ चाह-वहाँ राह यही कहावत सिद्ध हुई। क्योंकि राम कचहरी भरत मिलाप मंदिर में एक खिड़की के पास बैठे बाबा भगवानदास जी पखावज का अभ्यास करते मुझे दिख गये। उनसे निवेदन किया मैं भी पखावज सीखना चाहता हूँ। इस प्रकार बड़ी कठिनाइयों से जूझते हुए अट्ठारह वर्षों तक तबला, पखावज, हारमोनियम, बांसुरी, वाइलिन आदि का अभ्यास करता रहा। तुम बड़े सौभाग्यशाली हो जो घर से भागे और सीधे मेरे पास आ गए। अब न तुम्हें खाने की चिन्ता है और न सीखने के लिए किसी गुरु को खोजना है। चलो बहुत हो गया, अब भोजन की तैयारी करो मैं स्नान पूजा करके आता हूँ। क्योंकि आज बैंक आदि का कोई काम नहीं है, भोजन बना-खा करके मैं स्वामीजी के पैर दबाने लगा। इस समय भी स्वामीजी मुझे समझाते ही रहे। थोड़ा विश्राम के बाद 3 बजे मुझसे कहा बाजार जाक फूल, माला, प्रसाद आदि ले आओ। आज मंगलवार है, हनुमान जी का दिन है। मैं तुम्हें मंत्रदीक्षा एवं तबले का गण्डा आज ही इस शुभ मूर्हुत में ही बाँधूगा और अपना शिष्य बनाऊँगा। यह हमारा नियम है। आदेश पाकर सारा सामान खरीद लाया। 10 सितम्बर 1978 को उनका शिष्य बन गया। स्वामीजी ने तबला सिखाना प्रारम्भ कर दिया।

उनकी सिखाने की प्रणाली इतनी सरल थी कि सब कुछ समझ में आने लगा। सिखाते समय स्वामीजी इतने कठोर दिखते कि बस सामने दुर्वासा ऋषि ही बैठे तबला सिखा रहे हैं। बोल भूलने पर बड़ी मार खानी पड़ती। हाथ के रखरखाव पर भी स्वामी जी बड़ी बारीकी से ध्यान देते। स्वामी जी की शिक्षा प्रणाली ऐसी थी कि जैसा विद्यार्थी देखते वैसे ही बोल तुरंत बनाकर बताते। जैसे- यह एक तबले का तीन ताल का कायदा है, जो उन्होंने मेरा हाथ एवं दिमाग देखकर बताया था- धाऽतिर किटतक तिरकिट धाऽतिर किटतक तिरकिट धाऽतीऽ धाऽगेऽ, तिरकिट धाऽतिर किटतक तिरकिट धाऽतीऽ धाऽगेऽ तीऽनाऽ किऽनाऽ ताऽ तिर किटतक तिरकिट ताऽतिर किटतक तिरकिट ताऽकेऽ तिरकिट धाऽतिर किटतक तिरकिट धाऽतीऽ धाऽगेऽ धीऽनाऽ गिऽनाऽ। लगभग 10 पल्टों के साथ बताया। सुबह 3 बजे उठकर रियाज करने बैठना पड़ता। भोजन आदि की व्यवस्था भी देखनी पड़ती। अब स्वामीजी तबला, पखावज के साथ-साथ दोपहर 2 से 3 बजे रामचरित मानस का विधिवत् अर्थ समझाना और अनेक आध्यात्मिक कथाओं के माध्यम से आध्यात्मिक रहस्य समझाने लगे। जीवन जीने की कला के बारे में बड़ी बारीकी से समझाते। शाम को 3 बजे पुन: रियाज पर बैठे जाते इसी समय स्वामीजी का सिखाने का क्रम भी प्रारम्भ हो जाता साथ में अपना अभ्यास भी करते रहते। प्रत्येक मंगलवार को स्वामीजी अपने शिष्यों के साथ हनुमानगढ़ी हनुमान जी के दर्शन करने अवश्य जाते। वहीं उनके दीक्षागुरु बंगाली बाबा के पास भी वे 10 से 15 मिनट अवश्य बैठते। वापस लौटकर वही भोजनादि का क्रम रहता। उसी बीच स्वामीजी अपना संस्मरण भी सुनाते रहते। एक दिन स्वामी जी ने एक संस्मरण सुनाया- मैं अधिक समय यानी वर्ष में आठ माह रामलीला मण्डली में रहता था। मेरा पढ़ने-लिखने को बहुत मन करता एक बार छपरा (बिहार) के ठाकुर कवल सिंह जी से मेरी बात हुई। उन्होंने कहा- देखिए रामजी आपका रेगुलर स्कूल जाकर पढ़ना तो संभव नहीं है, किन्तु आप कहीं भी, कोई भी किताब या पन्ने मिले उन्हें आप अवश्य पढ़ा करिये और एक आध घंटे लिखने का भी क्रम बनाइए। इस बात को मैंने बहुत महत्व दिया। मन लगाकर 10 घण्टे रियाज रामलीला के काम के बाद समय निकालकर दो घण्टा पढ़ना-लिखना प्रारम्भ कर दिया। तब से अब तक ''गए दिन'' (देशभक्ति गीत) ''रसना-रसायन'' (भक्ति पद) दो भाग ''रामाभिनय'', ''तबला मृदंग प्रभाकर'' भाग-1, भाग-2, ''तबला कौमुदी'' भाग-1,2,3, ''मृदंग अंग'' सहित संगीत सम्बन्धी हजारों लेख क्रियात्मक और थ्यौरी के पत्र-पत्रिकाओं में छप चुके हैं और छपते ही रहते हैं। कुल मिलाकर मेरे जैसा अनपढ़ आदमी भी इतना सब कुछ कर सकता है तुम तो पढ़े-लिखे हो। मुझसे ज्यादा कुछ करके दिखाना। इस प्रकार अपने ही संस्मरणों के माध्यम से प्रेरणा देते रहते और साहस बढ़ाते। यही क्रम लगभग रात्रि भोजन के बाद जब वे विश्राम करने लगते और हम पैर दबाने लगते तब तक चलता रहता, जब तक उन्हें नींद न आ जाती तब तक व्यक्ति के व्यक्तित्व को ऊँचा उठाने वाली शिक्षाएँ वे देते ही रहते थे। खास कर किशोरावस्था में जब व्यक्ति अपनी व्यक्तित्व की नींव ढालता है उसे उसी समय सही मार्गदर्शक की आवश्यकता पड़ती है सो वह मुझे सहज ही मृदंग सम्राट स्वामी पागल दास के रूप में मिल गये। मुझे आश्रम में रहते अभी तीन-चार माह ही हुए होंगे की देखा स्वामीजी रात्रि में और जल्दी उठकर कुछ लिखते रहते हैं। एक दिन आखिर मैं पूछ ही बैठा महाराज जी आजकल आप कोई किताब वगैरह लिख रहे है क्या? उन्होंने कहा नहीं, मैं हर वर्ष अपने गुरुजी स्वामी भगवानदास जी के नाम पर एक संगीत समारोह कराता हूँ, उसी के लिए कलाकारों को पत्र लिखता रहता हूँ और साथ ही आर्थिक सहायता के लिए लोगों की सूची तैयार करता रहता हूँ। मैं भी उनके कार्यों में हाथ बँटाने लगा, आखिर वह दिन भी आ गया 20-21 अप्रैल 1971 जब चतुर्थ स्वामी भगवानदास संगीत समारोह सम्पन्न हो रहा था तब देखी स्वामी जी की विशाल व्यवस्था। प्रत्येक कलाकार के आवास पर जाकर उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं कार्यक्रम की सेटिंग तो बस सोचते ही बनती। अपने शिष्यों को भी कार्यक्रम में प्राथमिकता के साथ प्रस्तुत करते। जो शिष्य योग्य हो

Scanned with CamScanner

जाते उन्हें अपने साथ कार्यक्रम में बजवाते थे, एक को नहीं कई शिष्यों को साथ में बैठाते थे।

वह इस लिए संगीत जगत भी उनके शिष्यों को महत्व दे। किन्तु स्वामीजी सिफारिश के बड़े कट्टर विरोधी थे उन्होंने कभी अपने शिष्य की नौकरी या संगीत प्रतियोगिता में सिफारिश नहीं की। कहते थे मेरी शिक्षा इतनी उच्चकोटि की है जिसे किसी की दया की आवश्यकता नहीं है जिसे मैंने भी अनुभव किया जिस प्रतियोगिता में भाग लिया सफलता ही हाथ लगी। स्वामीजी में ये तो था कि अपने शिष्यों को तैयार करने में जी तोड़ मेहनत स्वयं करते थे और शिष्यों से भी 10-12 घण्टे अभ्यास कराते थे। वादन के साथ-साथ मंच पर बोलने एवं पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखने की भी उच्च शिक्षा वे प्रत्येक शिष्य को देते थे। एक विशेषता स्वामीजी अपने हर शिष्य में भरते थे वो थी कि जो शिष्य तबला बजाते है उन्हें पखावज एवं लहरा के लिए हारमोनियम की आवश्यक जानकारी अवश्य करा देते थे, एक बार मैंने स्वामीजी से पूछा महाराज जी आपने इतनी सारी क्रियात्मक सामग्री अपनी किताबों एवं पत्र-पत्रिकाओं में दी है जो और लेखकों की किताबों और लेखों में नहीं मिलतीं, और यदि मिलती भी हैं तो तबले के कायदों परनों में खाली भरी या तिहाई में सामंजस्य नहीं बैठता किन्तु आपके लिखे बोलों में ये बातें देखने को नहीं मिलतीं क्या बात है ? स्वामीजी ने इतने बड़े प्रश्न का उत्तर मात्र एक शब्द में दिया वह था कि जब मैं बोलों की रचना करता हूँ तो अपने आपको विद्यार्थी मानकर करता हूँ और हर बोल को बजाकर देखता हूँ कि बोल बजाने में कहीं कोई परेशानी तो नहीं होती यानी कि मैं विद्यार्थी बनकर बोलों की रचना करता हूँ, बोल परनो की रचना में भी यही ध्यान देता हूँ सुनने में श्रोता पूर्ण रस लें और कथा भी प्रचलित ही हो, जैसे - कालिया मर्दन परन-धाऽनता ऽनधागे तिटक्रधा ऽनधा कतगदि गनतेटे कतगदि गनधागे तेटकत गदिगन ग्वालवा ऽलसंग कृष्णक न्हैया करकंऽ दुकक्रीऽ डाऽनिम ऽग्रका लीऽदह केनिकट लपटिझ पटिझट पटमिलि खेलत दांऽवपें ऽचकरि देऽतले ऽतझट धाकिटधा किटतक तकिटत किटतेटे। तिरकिटतक तिरकिटतक तिर कि ट धिर कि ट तक धिर किटतकधिरकिट धिरधिरधिरधिर धिरधिरकिटतक तिरतिरतिरतिर किटतकतिरकिट ताऽनधा ऽनताऽ नधाऽन तथा तिग्धादिगदिग ततथेइ यथेइय थेइ। गेंऽदफें ऽकदई काली दहमेऽ ग्वालवा ऽलहठ कीन्हप करिपट लीऽन्हगें ऽदमोहि देऽवमं गाऽदऊं औऽरऔ ऽरनहिं लेऽऊक हेवअस कान्हध रोऽमन धीऽरप हुँचतव काऽलिं दीऽके तीऽरकू ऽदगये क्ड़ांऽक्ड़ां ऽन्कडां तिग्धेत्ता तिग्धादिगदगि तिग्धादिगदिग तिग्धादिगदिग थेइयथे इयथेइ। काऽलिय करहुंऽ काऽरउ ठेउफुं काऽरम चेवतब युद्धक्रु धकरि फनफुफ काऽरत जाऽनिना ऽगमन खोऽटकृ ऽष्णदै चोऽटकू ऽदिफन फनपग माऽरत मऽन्दम ऽन्दम ऽन्दमुस काऽइन टतपग पटकत थेइथेइ तादिगदिगता दिगदिगतादिग थोदिगदिगथो दिगदिगथोदिग तिग्धेऽतिग धे:तिग्धे: ऽतिग्धे: तिग्धादिगदिग करिवेहा ऽलतब नन्दला ऽलकाऽ लीऽमद मर्देउ त्राऽहिमा ऽमकहि नाऽगव धऽवंऽ दतप्रणा ऽमकरि पतिविही ऽनहम मरोंऽक्ष माऽप्रभु करोऽज गतकेऽ कर्ता धर्ता करुणा क्रन्दन सुनतद्र वेऽयशु दाऽकेऽ नन्दन जलमऽ प्रगटेऽ भंगनाऽ गफन ऊपर निरखिश्या ऽमछवि मगनगो ऽपगोऽ पीऽमन प्रमुदित पभअऊ नगरक रतसब जयजय बरसिप्र सूऽनबि बुधयश गाऽवत नाऽचत बिवुधव धूऽटीऽ छमछम छमछमा ऽतछन नननन नननन (तिग्धादिगदिग ततथेइ यथेइय थेइतत थेइयथे इयथेइ ततथेइ यथेइय थेइ)3।

आश्रम में रहते मुझे लगभग 1 वर्ष हुआ था तब तक मैं स्वामीजी से बहुत खुल गया था यानी स्वामीजी स्वयं इतने सरल स्वभाव के थे कि उन्होंने अपने हर शिष्य को माता-पिता, गुरु का प्यार मार-डाँट के साथ-साथ देवर-भाभी जैसी मजाक से भी पीछे नहीं पड़ते थे। दिनभर हँसाते-खिलाते सिखाते रहते। लेकिन सिखाते वक्त इतने सख्त होते कि दुर्वासा ऋषि भी उनके गुस्से के आगे कहीं

Scanned with CamScanner

नहीं टिकते। सप्ताह में एक दिन शुक्रवार को स्वयं रियाज नहीं करते थे, किन्तु अपने शिष्यों को अवश्य रियाज कराते थे और उसी दिन स्वयं लहरा लगाकर बजवाते थे, इसी क्रम में एक बार मैं नृत्य का आदेशी ताल परन बार-बार भूल रहा था और वो थे कि मारे जा रहे थे। कभी झापड़ से तो कभी छड़ी से लगभग चार घण्टे एक बोल के पीछे मार खाता रहा। अन्त में मैंने रोते हुए कहा- महाराज जी मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि गलती कहाँ हो रही है। बोल सम पर तो आ रहा है तब उन्होंने गाली देते हुए कहा आदेशी ताल परन के दो ही पल्ले तो तू बजा रहा है। आदेशी ताल परन की दूसरे पल्ले की तीसरी तिहाई एवं एक पल्ला पूरा छोड़ रहा है गिनकर बजा। चार घण्टे की ऐसी मार मैंने अपने जीवन में पहली बार खायी थी। पीठ एवं दोनों हाथ, पैर का कोई स्थान खाली न था जहाँ छड़ी एवं उनके हाथ की अंगुलियाँ न उछली हों। जब बोल सही बज गया तब उन्होंने चैन ली। तीन-चार दिन तक लगातार अपने हाथों से ही तेल मालिश करते रहे। साथ में सतर्क भी करते रहते थे कि अब कभी बोल न भूलना। नहीं तो इससे भी अधिक मार लग सकती है। जिस बोल पर मुझे मार लगी थी वह यह था-

'तत्तत् थुँ थुँ तिग्धादिगदिग थेई तत्तत् थुँ थुँ तिग्धादिगदिग थेई तत्तत् थुँ थुँ तिग्धादिगदिग थेई तिग्धादिगदिग थेईतिग्धा दिगदिग थेई तिग्धादिगदिग थेई तिग्धादिगदिग थेईतिग्धा दिगदिग थेई तिग्धादिगदिग थेई तिग्धादिगदिग थेईतिग्धा दिगदिग थेई तिग्धादिगदिग थेई '

नोट- फूल से पूरा बोल तीन बार बजता है। जैसे बोल भूलने पर उन्हें गुस्सा आती थी वैसे ही वे नशा से गुस्सा करते थे न वे स्वयं नशा करते थे, न अपने किसी शिष्य को नशा करने देते थे। यहाँ तक कि वे पान सुपारी तक से भी नफरत करते थे। कहते थे यह सब फिजूल खर्ची है जिससे आम कलाकार बच नहीं पाते। इसी के कारण अपना तथा अपने परिवार का खर्च नहीं चला पाते। अपनी कमाई का 10 से 50 प्रतिशत तक खर्च ऐसे ही फ़िजूल खर्च कर देते हैं और बाद में पश्चाताप करते घूमते हैं। मैंने ऐसे सैकड़ों कलाकारों के परिवारों को बड़े नजदीक से देखा है। उनके नाम लेकर उदाहरण भी देते थे और यह भी कहते फलाँ कलाकार बिना शराब के गाते-बजाते नहीं हैं। मंच पर जाने से पहले नशा अवश्य करते हैं। इनमें से अधिक के प्रोग्राम बिगड़ ही जाते हैं। नशे में क्या कार्यक्रम दिया जायेगा। क्योंकि नशा में व्यक्ति को होश नहीं रहता और बेहोश रहकर प्रोग्राम नहीं दिया जा सकता। इस प्रकार के विचार रखने वाले स्वामीजी स्वयं और अपने शिष्यों को सदैव सतर्क करते रहते थे। उनका कहना था कि जो भी शिष्य पाँच वर्ष तक आश्रम में रहकर विद्या अध्ययन करेगा और वह जाने लगेगा उसे आश्रम की ओर से मैं दस हजार रुपये नगद इसलिए दूँगा कि वह घर जाकर पैसों के लिए परेशान न हो। ऐसे उन्होंने लगभग 300 शिष्य तैयार किये हैं। जो संगीत के क्षेत्र में भारत में ही नहीं सारे विश्व में फैले पड़े हैं। उनकी अभिलाषा थी कि मृदंग आदि देव वाद्य है और आदिकाल में इसका इतना प्रचार था कि इसे ''साजन पति मृदंग'' अर्थात् सारे वाद्यों के राजा होने का गौरव प्राप्त था। बिना मृदंग के कोई संगीत सभा सम्पन्न नहीं होती थी। काश उन्हीं ऊँचाइयों तक मैं मृदंग को पहुँचा पाता! इसके लिए उन्होंने स्वयं अथक रियाज करके मृदंग वादन से सारे संगीत जगत् को झकझोर दिया वहीं दूसरी तरफ वैसा ही मृदंग का क्रिया पक्ष एवं साहित्य पक्ष भी संगीत जगत् में क्रान्ति लाया साथ ही अनेक शिष्य दिये जो आज संगीत की दुनिया में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुए हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए हनुमत विश्वकला संगीत आश्रम प्रमोद वन अयोध्या की स्थापना की। अब बारी हम शिष्यों की है और संगीत जगत् से जुड़े उन महानुभावों की है जिनके हाथों में अधिकार है कि मृदंग को ऊपर उठाने के लिए संकल्पित होकर उनकी परम्परा को चालू रख सकें।

स्वामी जी की अवधी घराने की गुरु शिष्य परम्परा के अन्तर्गत उन्हीं की प्रेरणा से तबला और पखावज (मृदंग) की विधिवत शिक्षा गायत्री तीर्थ शान्तिकुंज हरिद्वार में 30 सितम्बर 1990 से लगातार प्रदान कर रहा हूँ। इस परम्परा से शिक्षा प्राप्त करने वालों में डमरूधर मालाकार, राजकुमार भृगु, सुचिन्द्र दीक्षित, पवन श्रीवास्तव, शाश्वत चमोली, सोमनाथ निर्मल, रोबिन घोषाल, अनुपम सिंह, कृष्ण कुमार विसंदरे, मोहन दास, कुमार कश्यप, सुजीत बर्मन, डॉ. कर्षण पटैल, शान्तिलाल पटैल, राजाराम भाई पटैल, बसंत यादव, विपुल पटैल, पीयूष भट्ट, योगेश भाटिया, टेकेश्वर बिशेन घनश्याम सिन्हा, गोवर्धन धाकड़,अभिनव गौड़, अपूर्व उपाध्याय, अशुतोष साहु, कु. वसुधा सिन्हा, कु. स्नेहलता साहू, कु. शिवरंजनी डबराल, प्रेमकान्त साहू, प्रज्ञेश गढ़वाल आदि के अतिरिक्त आपके पुत्र सत्येन्द्र नामदेव कई प्रादेशिक एवं अखिल भारतीय संगीत प्रतियोगिताओं में प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्राप्त कर, भारत सरकार द्वारा जूनियर एवं सीनियर दोनों स्कालरशीप प्राप्त कर चुके हैं। साथ ही 2001 में तत्कालीन महामहिम राज्यपाल श्री सुरजीत सिंह बरनाला जी द्वारा बालकलाकार के रूप में सम्मानित हो चुके हैं। मनोज सोलंकी भी शिक्षा प्राप्त कर बाबा हरिबल्लभ अखिल भारतीय संगीत प्रतियोगिता जालंधर में द्वितीय स्थान एवं सप्तक संगीत प्रतियोगिता अहमदाबाद में द्वितीय स्थान, उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी संगीत प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त कर भारत सरकार द्वारा युवा कलाकार छात्रवृत्ति प्राप्त कर अवधी परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं।

- शान्तिकुंज, हरिद्वार(उत्तराखंड) 249411 मो.-092583 69659 ■

Scanned with CamScanner

आलेख

ठुमरी

– पं. श्रीधर व्यास
'नृत्य पुरोधा'

भारतीय शास्त्रीय संगीत की आधुनिक शैली ठुमरी है, जो कि श्रृंगार रस से ओत-प्रोत है। ठुमरी का स्वभाव कोमल है, यह नारी का अपने प्रियतम के प्रति प्रेम का वर्णन करती है। इसमें प्रियतम को सैंया, बालम, सांवरिया, बलमा इत्यादि नामों से सम्बोधित किया जाता है।

ठुमरी का उद्भव उत्तर प्रदेश में हुआ और वह नवाबों के दरबार में फली-फूली। ठुमरी गीत ब्रजभाषा और अवधी भाषा में रचे गये जो कि अत्यन्त मधुर और भाव पूर्ण है।

वैसे ठुमरी के बारे में कुछ निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता कि इसका उद्भव (जन्म) कहां, कब, कैसे और किसके द्वारा हुआ। इस सम्बन्ध में मान्यता इस प्रकार से है कि सन् 1486-1516 ई. में सुप्रसिद्ध ध्रुपद गायक राजा मानसिंह तौमर एक दिन भैरवी गा रहे थे, उसी समय अनायास ही उनसे एक विवादि स्वर लग गया जिसका प्रभाव उन्हें मनोहर लगा इस कारण उन्होंने और विवादि स्वरों का प्रयोग करके देखा तो जो स्वरूप बना उसे उन्होंने अपने नाम पर 'तौमर' रखा यही तौमर शब्द धीरे-धीरे बदल कर 'ठुमरी' बन गया।

कुछ मान्यता यह भी रही कि ठुमरी का जन्म भजन-कीर्तन से हुआ। पन्द्रहवी शताब्दी के उत्तरार्ध में वैष्णव मत के अनुयायी श्री वल्लभाचार्य ने वृन्दावन में और चैतन्य महाप्रभु ने बंगाल में श्रीकृष्ण भक्ति में जो पद गायन माधुर्य भाव में किये वह उस समय के पूर्व कभी नहीं प्रयोग में लाये गये अत: ठुमरी का जन्म इन्हीं भजनों एवं कीर्तनों द्वारा हुआ होगा।

कुछ संगीताचार्यों का यह मत रहा है कि ठुमरी का उद्भव लोक गीतों से हुआ जो कि नृत्य के साथ-साथ गाये जाते थे। यह कहा जाता है कि ठुमरी 'ठुमक' शब्द से निकला है, जिसका अर्थ सुन्दर पद-क्षेप होता है। इससे ठुमरी और नृत्य का आपस में सम्बन्ध सिद्ध होता है।

कुछ विद्वानों का मानना है कि ठुमरी का उद्भव छोटे ख्याल से सम्बद्ध है, इसका जन्म 19 वीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ। 19 वीं शताब्दी के प्रारंभ में गणिकाओं द्वारा नृत्य में ठुमरी गाने के प्रमाण मिलते हैं। कुछ विद्वानों की धारणा है कि प्राचीन 'चर्चरी' संज्ञक गीतों जिसका उल्लेख कालिदास ने भी विक्रमोर्वशीयम् में किया है और जो बाद में 'चांचर' कहलाये यही विकसित रूप ठुमरी है।

एक मान्यता यह भी है कि 19 वीं शताब्दी के आरंभ में उस्ताद गुलामनबी शेरी जो कि नबाब आसफुदौला के दरबार के प्रसिद्ध गायक गुलाम रसूल के पुत्र थे, उस समय ख्याल गायकी पर विशेष जोर दिया जाता था, ख्याल की जटिल ताने और शब्दों में अस्पष्टता को देख इन्होंने कुछ सरल गायकी की खोज की, वैसे कहा जाता है कि गुलामनबी शेरी का कंठ भी ख्याल गायन के अनुरूप नहीं था, लेकिन उनका स्वर मधुर एवं कोमल था। उन्होंने द्रुत ख्याल की जटिल और भारी तानों तथा स्वर के नटपन को दूर करके शब्दों पर अधिक बल देकर नई शैली को जन्म दिया। जिसे ठुमरी कहा गया।

ठुमरी की उत्पत्ति होते ही यह तीव्रगति से फूलने-फलने लगी और 19वीं शताब्दी के मध्य तक नबाब वाजिद अली शाह के शासन काल (1848-1856) ई. में यह युवावस्था तक पहुँच गयी। वाजिद अली शाह अवध के नबाबों में सबसे अधिक कला प्रेमी और कुशल नृत्यकार, गायक एवं गीत रचयिता तथा ठुमरी के बहुत बड़े संरक्षक थे और 'ठुमरी' से उनको विशेष अनुराग था। जिन्होंने करीब 1500 ठुमरी के रचना की उनमें से कुछ रचना आज भी प्रचलित है, इनके द्वारा रचित ठुमरी कत्थक नृत्य में भाव बताने के लिये सबसे अधिक प्रयुक्त होती है। ठुमरी की उत्पत्ति ठुमकने अर्थात् नाचने से हुई है, यह गायन शैली विशेषकर नृत्य के लिये ही निर्मित हुई है जिसे विशेष रूप से गणिकाओं ने अपनाया, अनेक ग्रन्थों में गणिकाओं द्वारा ठुमरी गाते हुए नृत्याभिनय करने का उल्लेख प्राप्त होता है।

ठुमरी का वर्गीकरण हम दो भागों में करते है-

1. विलम्बित ठुमरी जो कि ख्याल के अनुरूप होती है।

2. द्रुत ठुमरी जो नृत्य-भाव में प्रयुक्त होती है।

1. **विलम्बित ठुमरी :-** जो ठुमरी विलम्बित लय में गाई जाती है, जिसमें बोल बनाव या बोल आलाप की विशिष्टता रहती है वह विलम्बित ठुमरी कहलाती है, इसमें

Scanned with CamScanner

दीपचन्दी, जत ताल, अद्धा ताल का प्रयोग किया जाता है।

ठुमरी गायन कला की दृष्टि से विलम्बित ठुमरी साधारणतया चार भागों में विभक्त हो सकती है: -

पहला भाग- छोड़ या पकड़ है जोकि केवल एक छोटा आलाप होता है।

दूसरा भाग- स्वर विस्तार जो गायक ठुमरी राग के विभिन्न स्वरों का क्रमिक विस्तार करता है यह विस्तार शब्दों के आधार पर होता है। शब्द चित्रों को पूर्ण रुपेण स्पष्ट करने के लिये छोटी-छोटी ताने तथा मुरकियां व दूसरे राग वाचक स्वरों के उतार-चढ़ाव का सहारा लिया जाता है।

तीसरा भाग- काव्य भाव जो गीत, कविताओं की व्याख्या की जाती है और नये बोल संग्रहों को प्रगट किया जाता है, जो कि स्वर विस्तार की रीत में नहीं दिखलाये जा सके। साथ ही थोड़ा-सा अन्तरे का विस्तार कर इसमें ताने ली जाती है, जिसमें बोल तान, टप्पा तान, सपाट तान जमजमा की तान आदि हो सकती है। कभी-कभी टीप व ठहराव होता है यहां लयकारी भी प्रयुक्त होती है और बोल-बाट कर इस भाग को समाप्त करते है।

चौथा भाग- दुगुन या दून कहलाता है। यह अन्तरे के समाप्त होते ही प्रारंभ हो जाता है तब गायक एक या दो बोल के बाद तबला वादक को इशारा करता है और तबला वादक दूनीलय में त्रिताल बजाने लगता है तब गायक उस लय पर आ जाता है जो कि बराबर की लय कहलाती है। तबले पर जैसे-जैसे दुगुन चलती जाती है, गायक स्थायी के बोलों को द्रुत लय में स्वर के विभिन्न उतार-चढ़ाव के साथ गायन जारी रखता है। तबला वादक त्रिताल वादन कर कहरवा ताल में आ जाता है और बीच-बीच में लग्गी-लड़ी के साथ विभिन्न प्रकारों के सुन्दर बोल बजाता है और अन्त में स्थायी के बोल-शब्दों के साथ गायक गाकर तबले के बोलों की तिहाई के साथ सम पर आ जाता है और यही पर यह क्रम समाप्त होता है।

2. द्रुत ठुमरी :- बंदिशों की ठुमरी, लय प्रधान बोल-बाट की ठुमरी इसका प्रयोग अधिकतर नृत्य के साथ भाव दिखलाने में किया जाता है। जो भी ठुमरी द्रुत गति में गायी जाती है, उसको ही द्रुत की ठुमरी कहते है, इस प्रकार की ठुमरी त्रिताल, जतताल व कहरवा, दादरा ताल में गायी जाती है। लखनऊ के बिन्दादीन जी महाराज, कालिकादीन जी महाराज और फरुखाबाद के ललनपिया इस प्रकार की ठुमरी गायन करते थे।

द्रुत ठुमरी में कुछ चटपटापन, चंचलता, चपलता, तकरार और प्रेमयुक्त विवादों का पुट रहता है। अधिकतर ठुमरी कविता में केवल स्त्री की ओर से पुरुष के प्रति प्रेम सम्बन्ध मिलता है। उस स्त्री को यहां पर 'राधा' और 'पुरुष' को श्रीकृष्ण, श्याम, कन्हैया, कान्हा, मोहन, बनवारी, गिरधारी आदि नामों से पुकारा जाता है। ठुमरी के भाव विशेषकर राधा-कृष्ण की छेड़छाड़ आदि लीलाओं पर होते है तथा अष्ट नायिका के भी भाव रहते है। यह ठुमरी कत्थक नृत्य में विशेष प्रयुक्त रही है।

ठुमरी मुख्य रूप से शृंगार और करूण रस पर आधारित होती है, यह स्त्री जाति के अत्यंत कोमल पक्ष को व्यंजित करती है। इसका वर्णन करने के लिये अपेक्षाकृत सुकुमार सांगितिक स्वरों की आवश्यकता होती है। शृंगार रस, भक्ति रस, करूण रस को ही अधिकतर ठुमरी में स्थान दिया जाता है, ये सभी शृंगार रस की शाखाएँ है।

ठुमरी का कार्य केवल उस रति भाव को ही प्रगट करना नहीं होता जोकि एक स्त्री अपने प्रिय स्वामी के लिये रखती है बल्कि उन अन्य भावों को भी जो कि उस मुख्य भाव से है, जिन्हें प्रकट करती है वे भाव हैं- उत्सुकता, वेदना, आनन्द, चंचलता आदि।

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय शैलियों में सुन्दरता को व्यक्त करने के लिये ठुमरी को ही सबसे अधिक सफलता प्राप्त हुई है। ठुमरी में सौन्दर्य की वृद्धि के लिये तानों एवं कई प्रकार के अलंकारों का प्रयोग होता है। व्यवहारिक रूप से इसमें कल्पना को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है। यह अपने रागों के स्वरों की सीमा का उल्लंघन कर सकती है, क्योंकि यह अपने रागों में अन्य सह जातीय रागों के स्वरों को लगा सकती है और उन स्वरों के आलाप तान तथा अलंकारों का उस ढंग से प्रयोग करती है, जहां तक वे इसको सजाने में सहायक होते है जो कि अत्यंत चिन्ताकर्षक होते है।

ठुमरी में प्रयोग होने वाले राग- भैरवी, खमाज, काफी, सिन्ध खमाज, गारा, तिलक कामोद, पीलू, देस, बरवा, बिहाग, सोहनी, सूहाकन्हडा, झिंझोटी, सिंध काफी, जंगला, बिहागडा, शहाना, जोगिया, कालिंगडा, बागेश्री, नंद, माण्ड, धानी, खम्बावती, जयजयवन्ति आदि हैं।

Scanned with CamScanner

ठुमरी एक ललित शास्त्रीय गायन है, जिसमें भावनाओं के प्रकटीकरण को महत्व दिया जाता है। ठुमरी हर व्यक्ति के लिये प्रिय है, चाहे वो संगीत का जानकार हो या नहीं।

शास्त्रीय गायन में ठुमरी गाने की तीन शैलियाँ प्रचलित हैं

1. लखनऊ, वाराणसी(बनारसी) या पूर्वी अंग की ठुमरी- पूर्वी अंग की विलम्बित ठुमरी का उद्‌भव बीसवी शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में हुआ विलंबित ठुमरी का वर्णन पूर्व में किया जा चुका है। यहां कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है, केवल इतना कहा जा सकता है कि इस अंग की विलम्बित ठुमरी अधिकतर उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल में वर्तमान काल में गायी जाती है।

2. पंजाब अंग की ठुमरी :- पूर्वी व बम्बई अंग की ठुमरियों की अपेक्षा थोड़े ही वर्ष पहले यह प्रकाश में आयी। इसका उद्‌भव भारत स्वतंत्रता के बाद हुआ। कुछ सीमा तक यह पूर्वी अंग की शाखा है, इसको उस्ताद बड़े गुलाम अली खां साहेब ने प्रचलित किया।

3. मुंबई, पुणे क्षेत्र की ख्याल अंग की ठुमरी :- इसका प्रचलन मुम्बई, पुणे की ओर ख्याल अंग से गायी जाती है। ख्याल अंग की ठुमरी का जन्म जब हुआ तो वह ख्याल अंग के ढंग से गायी जाती थी और उन्नीसवीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश, बिहार में प्रचलित थी। द्रुत ठुमरी इन प्रान्तों में तथा मुम्बई और पुणे क्षेत्र में अब भी इसी ढंग से गायी जाती है। इसको मुंबई और पुणे शैली इसीलिये कहा गया है कि यह वहां की प्रचलित शैली है। उस क्षेत्र के किसी भी गायक ने आज तक पूर्वी अंग की शैली ग्रहण नहीं कीं। यहां के गायक ठुमरी भी ख्याल अंग से गाते है। इस शैली के गायकों में बेगम अख्तर, रसूलन बाई, असगर्र बेगम, गिरिजा देवी, शोभागुर्टू, सुची श्रीराम, शोभा घोष आदि है।

ठुमरी गायन की विशेषता

1. ठुमरी का उद्‌भव उत्तर प्रदेश में हुआ।
2. ठुमरी में सभी हिन्दुस्तानी शैलियों की मुख्य-मुख्य विशेषताएँ पाई जाती है।
3. ठुमरी एक ललित शास्त्रीय संगीत कहलाती है।
4. ठुमरी दो प्रकार की होती है-**पहला**- बोल-बनाव की ठुमरी, **दूसरा**- बंदिश या बोलबांट की ठुमरी।
5. ठुमरी के केन्द्र लखनऊ, बनारस, पटना रहे हैं।
6. ठुमरी हिन्दुस्तानी संगीत की वह आधुनिक शैली है जो मुख्यत: श्रृंगार रस से ओत-प्रोत है।
7. ठुमरी के निर्वाह में स्वर विस्तार की प्रक्रिया बहुत महत्व रखती है।
8. ठुमरी गायक स्वरों और शब्दों द्वारा मन: स्थिति को प्रकट करता है।
9. ठुमरी का सिद्धान्त भारतीय की प्रत्येक शैली के मत के समान है।
10. ठुमरी स्त्री वाचक होने के कारण केवल स्त्री रागों अर्थात् रागिनियों तक ही सीमित है।
11. ठुमरी का उन नपुंसक रागों से कोई सम्बन्ध नहीं है जिनमें अरूचि और घृणा जैसे भाव पाये जाते है।
12. ठुमरी कविता का विषय मुख्यत: नारी का प्रेम अपने प्रियतम के प्रति होता है।
13. ठुमरी का स्वभाव निर्मल है।
14. ठुमरी एक विशेष प्रकार की गीत शैली है जो अपनी प्रकृति से चपल भी है और भाव प्रवण तथा सरस भी।
15. ठुमरी अनेक रस वाला एक भाव संगीत है, जिसमें बोल प्रधान होते है।
16. ठुमरी ध्रुपद और ख्याल के समान नियंत्रित शैली नहीं है।
17. ठुमरी गायन शैली ख्याल और ध्रुपद से भिन्न है।
18. ठुमरी की कविता ब्रजभाषा और अवधी में रहती है।
19. ठुमरी की प्रकृति चंचल व भाव कोमल है।
20. ठुमरी मुख्यत: श्रृंगार रस प्रधान और नायिका भेद पर आधारित है।
21. ठुमरी का कत्थक नृत्य से पारम्परिक सम्बन्ध है।
22. ठुमरी शब्द की उत्पत्ति ही ठुमकने (नाचने) से हुई है।
23. ठुमरी राजा और दरबारों की शान रही है।
24. ठुमरी को गणिकाओं ने भी अपनाया।
25. ठुमरी की कविता में स्त्री के प्रति पुरुष का तथा पुरुष के प्रति स्त्री का प्रेम वर्णित होता है।
26. ठुमरी केवल श्रृंगार और करुण रस पर ही आधारित होती है।
27. ठुमरी के मुख्य तीन अंग प्रचलित है, पहला- पूर्वी अंग, दूसरा- पंजाबी अंग, तीसरा- ख्याल अंग।
28. ठुमरी के रागों में कोमल गंधार अथवा कोमल निषाद या दोनों ही पाये जाते हैं।
29. ठुमरी के राग- भैरवी, खमाज, सिंध खमाज, सिंध भैरवी, गारा, काफी, तिलक कामोद, देस, बरवा, बिहाग, पीलू, सोहनी, सूहाकन्हड़ा, झोटी, सिंध काफी, जंगला, बिहागड़ा, शहाना, तिलक बिहारी, विलास खानी तोड़ी, जोगिया, कालिंगड़ा, बागेश्री, माण्ड, खम्बावती, धानी, नन्द और कलावती।
30. ठुमरी संगति- सारंगी, बेला, हारमोनियम, तबला से की जाती है।
31. ठुमरी में प्रयुक्त तालें- त्रिताल, जद, दीपचन्दी, अद्धा कहरवा और दादरा आदि।
32. ठुमरी की सबसे अधिक सफलता शास्त्रीय संगीत की शैलियों में सुन्दरता व्यक्त करने के लिये प्राप्त हुई है।
33. ठुमरी रचयिता अपने उपनाम के आगे पिया शब्द जोड़ते थे, जैसे- सुघर पिया, सनद पिया, चांद पिया, कदर पिया, चतुर पिया, माधोपिया, मोज पिया, रक्खल पिया, ललन पिया, अहमद पिया, दरस पिया, अख्तर पिया आदि।

- छप्पन भैरव मंदिर, भागसीपुरा, उज्जैन, (म.प्र.) सतत् सम्पर्क-098273 41032

Scanned with CamScanner

आलेख

भारतीय शास्त्रीय संगीत की ध्रुवपद गायकी के शिखर पुरुष- 'वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग'

- डॉ. श्याम सुन्दर शर्मा
(ध्रुवपद गायक)

भारतीय शास्त्रीय संगीत की प्राचीन एवं सुदीर्घ परम्परा रही है। समय के विभिन्न कालखण्डों में समसामयिक वातावरण में भारतीय संगीत मनीषियों ने भारतीय संगीत की समृद्ध एवं अमूल्य वैदिय परम्परा को संरक्षित एवं संवर्द्धित करने में अपना महती योगदान दिया है। भारतीय संगीत आचार्यों की सुदीर्घ-परम्परा है इसमें उल्लेखनीय है- स्वामी हरिदास, तानसेन, बैजु, बक्शु, चरजू, पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर, पं. विष्णु नारायण भातखण्डे, पं. डी.वी. पलुस्कर, पं. ओमकार नाथ ठाकुर, पं. राजा भैया पूंछ वाले इसी क्रम में 21वीं सदी के भारतीय शास्त्रीय संगीत के वरिष्ठतम प्रतिनिधि संगीताचार्य वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग 'संगीत वारिधि' प्राचीन एवं सामवैदिक गायन शैली ध्रुवपद-गायकी के पर्याय एवं वर्तमान संगीत साधकों, संगीत रसिकों के प्रेरणास्रोत व आदर्श है।

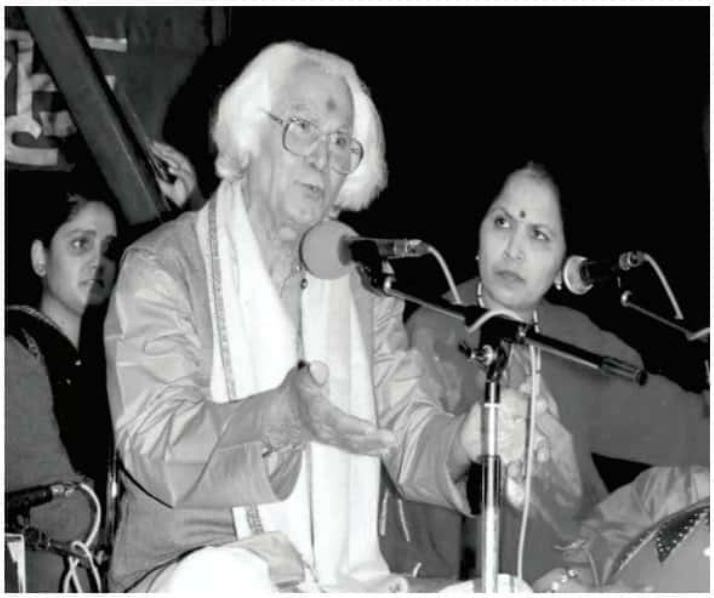

प्रस्तुत लेख में आपके विलक्षण एवं बहुआयामी व्यक्तित्व को प्रस्तुत कर इनके विभिन्न आयामों से रू-ब-रू करा रहा हूँ-

* वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग का जन्म, पारिवारिक पृष्ठभूमि, संगीत शिक्षा

* ध्रुवपदाचार्य पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग का व्यक्तित्व-कृतित्व (रचना-कर्म)

* पं. जी को प्राप्त सम्मान

वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट का तैलंग का जन्म, पारिवारिक पृष्ठभूमि एवं संगीत शिक्षा

राजस्थान की ध्रुवपद-गायन परम्परा के एक मात्र प्रतिनिधि वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग वर्तमान में भारतीय शास्त्रीय संगीत की ध्रुपद गायकी के वरिष्ठतम् ध्रुवपदाचार्य है। पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग का जन्म 24 दिसम्बर सन् 1928 को जयपुर के सुप्रसिद्ध सांगीतिक भट्ट परिवार में हुआ। आपकी सुदीर्घ व पुष्ट सांगीतिक पारिवारिक पृष्ठभूमि रही है। आप पितामह पं. गोपाल जी भट्ट व पिता पं. गोकुल चन्द्र भट्ट ध्रुवपद संकीर्तन पुष्टिमार्गीय हवेली संगीत के पुरोधा गायक रहे हैं। पंडित जी की समृद्ध पारिवारिक परम्परा के सन्दर्भ में सुप्रसिद्ध संस्कृत विद्वान देवर्षि कलानाथ शास्त्री का कहना है कि ''पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग जैसे उच्च कोटि के संगीतज्ञ आपकी समृद्ध कुल-परम्परा एवं गुरु-परम्परा से संस्कारित, शिक्षित, प्रशिक्षित और परिनिष्ठित है, जो भारतीय संगीत की घराना अवधारणा को पुष्ट करती है।'' पंडित जी की प्रारम्भिक बुनियादी तालीम घर के सांगीति वातावरण में हुई। आपकी संगीत की विधिवत् अकादमिक संगीत शिक्षा ग्वालियर घराने के पं. राजा भैया 'पूछवाले' नातू साहब, पंचाक्षरी साहब, एन.एल. पुणे साहब, अग्निहोत्री साहब एवं तिखेसाहब के सान्निध्य में हुई। सन् 1956-58 तक भारत सरकार की विशिष्ट छात्रवृत्ति के अन्तर्गत आपने सुविख्यात ध्रुवपद गायकों उस्ताद नसीर मोइनुद्दीन एवं अमीनुद्दीन खां डागर से भारतीय कला केन्द्र, नई दिल्ली में ध्रुवपद-गायन की गहन तालीम प्राप्त कीं। आपने उस्ताद हाफिज अली खाँ से रुद्रवीणा एवं पं. पर्वत सिंह, पं. माधो सिंह, पं. विजय सिंह व पंडित पुरुषोत्तम दास से पखावज की विधिवत तालीम ली। 1956 में आपने माधव संगीत

Scanned with CamScanner

महाविद्यालय, ग्वालियर से स्नातकोत्तर उपाधि प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की।

ध्रुवपदाचार्य वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग का व्यक्तित्व-कृतित्व रचना कर्म

पंडित लक्ष्मण भट्ट तैलंग ने अपनी गहन संगीत तालीम अनवरत संगीत-साधना, चिंतन-मनन एवं सूक्ष्म अन्वेषण दृष्टि से संगीत के प्रायोगिक पक्ष एवं रचना कर्म के सृजन में नूतन आयाम स्थापित किए। पंडित जी ने अपनी ईश्वर प्रदत्त ओजपूर्ण आवाज़ में भावपूर्ण समन्वय कर ध्रुवपद-गायन की 'लड़न्त-भिड़न्त' वाली धारणा से इतर एक भावपूर्ण गायन शैली को स्थापित किया। पंडित जी ने सन् 1956 से वर्तमान तक देश के लगभग सभी प्रतिष्ठित संगीत समारोहों में शिरकत कर अपनी भावपूर्ण एवं ध्रुवपद गायकी की गम्भीरता एवं दमखम का संतुलित समन्वय कर अपने विलक्षण एवं प्रभावपूर्ण गायन की अमिट छाप छोड़ी। प्रमुख संगीत समारोह में तानसेन समारोह, ग्वालियर, रीवा, 'स्वामी हरिदास' समारोह मुम्बई, वृंदावन, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, गुजरात, दिल्ली संगीत नाटक अकादमी द्वारा आयोजित संगीत समारोह उल्लेखनीय है। पंडित जी की ओजपूर्ण एवं भाव प्रधान गायकी के साक्षी रहे पं. कलानाथ शास्त्री का कहना है कि ''पंडित लक्ष्मण भट्ट को मैंने अपने बाल्यकाल से ही सुना है, आपकी गायकी में शास्त्रीयता एवं भाव प्रवणता का बेहतर सामंजस्य है जो आपके गायन पर पुष्टिमार्गीय परम्परा के प्रभाव को परिलक्षित करते हैं।'' आकाशवाणी के भूतपूर्व निदेशक स्व. रमेश चन्द्र भट्ट का पंडित जी की गायन शैली के सन्दर्भ में कहना था कि ''हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में पंडित लक्ष्मण भट्ट तैलंग के गायन का ध्रुवपद-धमार, गायन शैली में विशिष्ट स्थान है। आपने अपने सिद्ध पूर्ण गायन से ध्रुवपद धमार व ख्याल गायन को चमत्कार पूर्ण स्वरूप में पल्लवित व प्रसारित किया है।'' कला-मर्मज्ञ एवं कला समीक्षक डॉ. दुर्गा प्रसाद अग्रवाल के अनुसार ''पंडित जी का ध्रुवपद गायन, ध्रुवपद गायकी की परम्परागत शैली के साथ-साथ श्रोताओं को भाव-सम्प्रेषण के स्तर पर भी जोडता है।'' पंडित जी के गायन की सी.डी. 'ध्रुवपद रसमंजरी' एवं 'गुरु नमन' एवं अष्ट प्रहर के रागों की ऑडियो सी.डी. जर्मनी में रिलीज़ की गई है। पंडित जी द्वारा भारतीय संगीत के रागदारी पक्ष का गहन चिंतन एवं सृजन द्वारा नवीन रागों मेवाड़ा दरबारी, जौन-तोड़ी, जोगश्री, जागेश्वरी, केदार-कल्यामण की कल्पना कर इन रागों में मौलिक रचनाओं का प्रस्तुत किया गया है। साथ ही पंडितजी ने अद्धा चौताल की भी कल्पना कर उसका सफल मंचीय प्रदर्शन करवाया है। पंडित जी ने ध्रुवपद-गायन को समसामयिक एवं लोकप्रिय बनाने की दृष्टि से मीरा, तुलसी, नानक, कबीर, टैगोर, निराला, महादेवी वर्मा एवं विवेकानन्द की लोकप्रिय रचनाओं को ध्रुवपद रचनाओं के स्वरूपों में प्रस्तुत कर ध्रुवपद गायन के रचना कर्म के क्षेत्र में नवीन आयाम स्थापित किये है। पंडितजी ने लगभग 8 दशक की संगीत यात्रा के दौरान अपने सूक्ष्म अन्वेषण से संगीत के शास्त्र पक्ष एवं प्रयोगात्मक पक्ष की विशद व्याख्या विभिन्न व्याख्यान मालाओं, संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, आलेखों द्वारा प्रस्तुत कर संगीत जगत् को नवीन दिशा प्रदान की हैं। पंडित जी के सृजनकर्म का एक पक्ष जो आपकी सृजनात्मकता को नवीन आयाम देता है कि आप हमेशा अपने

Scanned with CamScanner

रचनाकर्म में राष्ट्रीयता एवं युवा पीढ़ी में नैतिकता एवं संस्कारों के पल्लवन के पक्षधर रहे है, जो आपकी रचनाओं के साहित्य में उजागर होता है। पंडित जी ने इकबाल की रचना 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्तान हमारा' एवं 'वन्दे मातरम' को ध्रुवपद रचनाओं में ढाल कर प्रस्तुत करवाया जो काफी लोकप्रिय रहा। पं. जी ने अपने दिल्ली प्रवास के समय ध्रुवपद रचनाकर्म से इतर भारतीय कला केन्द्र नई दिल्ली में शंभु महाराज, बिरजू महाराज एवं पं. नरेन्द्र शर्मा द्वारा निर्देशित संगीत नृत्य नाटिका में अपनी सृजनात्मक-प्रयोगधर्मिता का सफल प्रदर्शन किया। पंडित जी ने अनुभव जन्य संगीत शिक्षण प्रणाली में संगीत शिक्षण को अधिक सरलीकृत एवं रुचिपूर्ण बनाने के क्रम में समान स्वर शब्द रचनाएं- **''माँ माँ माँ माँ पानी परे, सारे सारे गाम रे। मम्मी-मम्मी पापा, सा रे ग मा पा, सां नी ध प म। पानी पानी परे, पानी भरे''**, **''नीर गगरी सिर पर धरी नार''** एवं **''माँ शारदे, साद्यो सुरन सों, माँ मग दे माँ।''**

इसके अतिरिक्त पंडित जी थाट माला एवं राग-माला जैसे प्रयोगात्मक सृजन भी किए जो संगीत शिक्षण में प्रभावी एवं कारगर सिद्ध हुए। पं. जी ने अपने अनवरत सृजन कर्म को संगीत जगत् के समक्ष तीन संगीत ग्रंथों- रसमंजरी शतक, संगीत रस मंजरी एवं पंचाशिका संगीत, विमल मंजरी के स्वरूप में रखा जो विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल कर संगीत शिक्षण के विभिन्न पक्षों को उजागर करते हुए प्रामाणिकता के साथ संगीत साधकों, विद्यार्थियों का निरन्तर मार्गदर्शन कर रहे है। पंडित जी द्वारा गाये गये 'राग दीपक' एवं 'राग मेघ' के द्वारा संगीत-चिकित्सा का भी सफल प्रयोग किया गया है।

पंडित जी का सरल सहज एवं बेलाग, स्पष्टवादी व्यक्तित्व, जीवन के उच्च आदर्श, वाणी माधुर्य एवं मंचीय प्रस्तुतीकरण में श्रोताओं के साथ जीवन्त संवाद, पलभर में श्रोताओं को अपने ओजपूर्ण गायन के सम्मोहन में बाँधने का चमत्कार जैसे गुणों से ओत-प्रोत आप संगीत जगत में विशिष्ट एवं विरले करिश्माई कलाकार व्यक्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित है।

वाग्गेयकार पंडित लक्ष्मण भट्ट तैलंग को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान

पंडित जी जैसे विलक्षण, ओजस्वी व्यक्तित्व को अनेक संस्थाओं द्वारा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेकों सम्मान उपाधियों, पदवियों से सम्मानित कर आपकी कला-साधना एवं आपके भारतीय शास्त्रीय संगीत के विविध आयामों के प्रचार-प्रसार में आपके महती योगदान को प्रतिष्ठित करते हुए गौरवान्ति हुई है। पंडित जी को सम्मानित किये, प्रमुख सम्मान उल्लेखनीय हैं- भारतीय कला केन्द्र नई दिल्ली की 'संगीत वारिधि' वाराणसी महाराजा द्वारा प्रदत्त 'स्वाति तिरून्नाल' दो बार 'तुलसी सम्मान', महाराणा उदयपुर के 'डागर घराना अवार्ड', महाराजा जयपुर 'ईश्वरी सिंह सम्मान', राजस्थान संगीत नाटक अकादमी अवार्ड, औदीच्य समाज सम्मान, जय प्रकाश नारायण सम्मान, सुर सिंगार संस्था, मुम्बई के गुणीजन एवं श्रेष्ठ गुरु सम्मान, श्री गोपाल पुरोहित सम्मान, समाज सम्पदा सम्मान, 'ध्रुवपद-कौस्तुभ', 'संगीत-रत्नाकर', 'स्वर रत्न', संस्कार भारतीय सम्मान, अभिनव कला परिषद्, भोपाल द्वारा 'श्रेष्ठ आचार्य' राजस्थान राज्यपाल, मुख्यमंत्री एवं भारत के महामहिम राष्ट्रपति द्वारा दिए गए अभूतपूर्व सम्मान, 2017 में वाराणसी में अन्तर्राष्ट्रीय ध्रुवपद मेला में वाराणसी महाराणा श्री अनन्त विभूति नारायण जी द्वारा पं. जी को 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' सम्मान से सम्मानित किया गया। पं. जी को विभिन्न कला अकादमियों एवं शिक्षण संस्थाओं की गवर्निंग बॉडी एवं पाठ्यक्रम निर्माण समिति की सदस्यता प्रदान कर आपके अनुभवजन्य दीर्घ-संगीत पांडित्य का संगीत को सार्थक दिशा प्रदान करने में सदुपयोग किया गया है।

वाग्गेयकार पंडित लक्ष्मण भट्ट तैलंग की शिष्य परम्परा वृहद रही है। पंडित जी के सानिध्य में देश-विदेश के लगभग शतकाधिक शिष्य, भारतीय शास्त्रीय संगीत की विभिन्न विधाओं ध्रुवपद, वीणा, सितार, बेला-वादन पखावज, तबला इत्यादि में विधिवत रूप से तालीम लेकर सुसंस्कारित हुए है। आपकी पारिवारिक संगीत परम्परा भी लगभग 500 वर्ष पुरानी हैं, आपके समस्त पुत्र-पुत्रियाँ भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रचार-प्रसार में संलग्न है। उल्लेखनीय रूप से आपकी यशस्वी पुत्री एवं विदूषी डॉ. मधु भट्ट तैलंग ने अपनी पारिवारिक विरासत ध्रुवपद गायन को विश्व फलक पर प्रतिष्ठित किया है, साथ ही आपके सुपुत्र पं. रविशंकर भट्ट तैलंग बहुआयामी एवं हरफन मौला कलाकार है जिन्होंने स्वकल्पित पंचतंत्री वीणा-वादन एवं गायन में अपनी गहन साधना एवं संगीत माधुर्य को प्रमाणिक रूप से प्रतिष्ठित किया है।

वाग्गेयकार पं. लक्ष्मण भट्ट तैलंग की अपनी नब्बे दशक की अनवरत सांगीतिक यात्रा वर्तमान युवा पीढ़ी के समक्ष अपनी अनवरत संगीत-साधना, कला के प्रति समर्पण, सांगीतिक गहन चिंतन, मनन, भारतीय शास्त्रीय संगीत की पवित्रता एवं शुद्धता के लिए संकल्प, भारतीय संस्कृति व नैतिक मूल्यों के प्रबल हितेषी, भारतीय संगीत के आपका बहुआयामी महती योगदान इत्यादि के सन्दर्भ में सदैव प्रेरणा स्रोत बनी रही है। आपका विराट, ओजस्वी, अद्वितीय व्यक्तित्व समस्त संगीत जगत, कला-साधकों, संगीत-रसिकों इत्यादि को भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रति सदैव ऊर्जा एवं नित-नई प्रेरणा देता रहेगा।

- मार्फत राधा गोविन्द डिपार्टमेंटल स्टोर, पानी की टंकी के पास, क्लार्क्स आमेर दुर्गापुरा, जयपुर (राजस्थान) -302018

Scanned with CamScanner

परकाया प्रवेश

विश्व कविता
मुइसेर एनिया की कविताएँ

- अनुवाद : मणि मोहन

मुइसेन एनिया : जन्म-1984 , इज़मिर (तुर्की) । अभी तक दो कविता संकलन। विश्व के अनेक कवियों के रचनाकर्म का अंग्रेजी, तुर्की और स्पेनिश भाषा में अनुवाद किया। विश्व की विभिन्न भाषाओँ में युवा कवयित्री मुइसेर की कविताएँ अनूदित। हिंदी में अनूदित कविताओं का एक संकलन "अपनी देह और इस संसार के बीच " हाल ही में बोधि प्रकाशन जयपुर से प्रकाशित ।

विलाप

एक स्त्री होने का अर्थ
रौंदा जाना है , ओ माँ !

उन्होंने सब कुछ छीन लिया मुझसे

एक स्त्री ने मेरा बचपन लिया
एक पुरुष ने मेरा स्त्रीत्व ....

ईश्वर को स्त्री की रचना नहीं करनी चाहिए
ईश्वर को जन्म देना नहीं आता

यहाँ, सभी पुरुषों की पसलियां
टूटी हुई हैं

हमारी ग्रीवायें बाल से भी ज्यादा पतली हैं

पुरुष उठाये हुए हैं हमें
अपने कन्धों पर ताबूत की तरह

हम उनके पैरों के नीचे रहे

किसी पँख की तरह
हम उड़े एक दुनियां से
एक आदम की तरफ

और मेरे शब्द, ओ माँ !
उनके पदचिह्न हैं .....

तलवार का घाव

खुद के सिवा कोई नहीं मेरे पास
एक भी दिन नहीं
इस रात के बाहर मेरे पास

बर्फ़बारी के बीच मैं नींद के आग़ोश में जा रही हूँ
इस देह के साथ जिसे कुत्तों ने
तार-तार कर दिया है

मैं इंतज़ार कर रही हूँ ज़िन्दगी के गुज़रने का
तलवार का एक गहरा घाव है
मेरी जांघो के बीच

मैं यहाँ आई
एक स्त्री की कोख भरने के बाद

मुझे नापसन्द थी यह दुनियां
जिसे मैंने उसकी नाभि से देखा था

खुद से बाहर कोई नहीं मेरे पास
एक दिन तक नहीं
रात से बाहर
मेरे पास ।

गुलदान

वक्त ठहरा हुआ है, वहां
किसी ठोस गुलदान की तरह

दिल बुहार रहा है टूटे हुए टुकड़े
पैरों के नीचे

बहुत मुश्किल है समझना
आत्मा की पसोपेश
और यह दुनियां
यह व्यवस्था

हमारे अंदर की ऊब
मृत्यु को बढ़ा रही है

एक सीरियाई लड़का बह कर
आ चुका है किनारों तक
इस शहर में लोग
बन्दूक की गोलियां खाकर जिन्दा हैं

मैं पुकार रही हूँ अपनी आत्मा को
कहीं कोई आवाज़ नहीं ।

प्रो. मणि मोहन अनुवाद के क्षेत्र में लंबे समय से सक्रिय हैं । अनुवाद के अलावा वे समकालीन हिंदी कविता के समर्थ कवि भी हैं । अनुवाद के माध्यम से वे हमें विश्व साहित्य की विरासत और हलचल से अवगत कराते रहते हैं ।
सम्प्रति- शा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय गंज बासौदा में अंग्रेजी के प्राध्यापक ।
मो.- 09425150346

Scanned with CamScanner

मधु प्रसाद के गीत

मधु प्रसाद
जन्म : जनवरी 1956, चंदौसी(उ.प्र.)
प्रमुख कृतियाँ : आँगन भर आकाश, साँस साँस वृन्दावन, जिजीविषा, दोहा संग्रह।
संपर्क : - 29, गोकुलधाम सोसायटी, कलोल-महेसाणा, राजपथ, चांदखेड़ा, अहमदाबाद-382424 (गुजरात) मो.- 95580 20700

मौसम बना सवाली है

धूप जा रही है आँगन से
साँझ उतरने वाली है
चलो मीत ! कुछ दु:ख-सुख बाँटें
यादों में हरियाली है !

कभी नहीं विस्मृत होते हैं
कच्चे अमरूदों के दिन
नदी किनारे दौड़-पकड़ के
वे भोले मीठे पल-छिन
उतर कहाँ पाया आँखों से
बचपन पकड़े डाली है !

दस्तक दी ज्यों ही वसन्त ने
यौवन ने पट खोल दिए
टेसू ने आँचल रंग डाला
बाँस-वनों ने बोल दिए
गले मिल रही है मलयज से
पुरवा कुछ मतवाली है !

अन्तर की बातें अन्तर को
संप्रेषित करती आँखें
रक्त-शिराओं में हलचल है
सपनों ने पाई पाँखें
बाहों में नीलाम्बर भर लूँ
ऋतु की सोच निराली है !

लेकर साँसों की माला को
इच्छाएँ द्वारे आईं
आशाओं के मण्डप बैठीं
नव लतिकाएँ शरमाईं
कलश भर रहा अभिमन्त्रण का
वार फेर भर थाली है !

आरोहण-अवरोहण के स्वर
ताल संग करते नर्तन
कजरी, चैती, ध्रुपद, दादरा
मन में होता अनुगुंजन
सप्त सुरों में कैसी अनबन
मौसम बना सवाली है !

जीवन की सँझबाती कर लें
मौन हुआ अब कोलाहल
ध्यान-मनन की बेला आई
अवचेतन के जागे पल
प्राण पखेरू को करनी अब
अम्बर की रखवाली है !

आए मेघ बहारों के सखि!

आए मेघ बहारों के सखि !

तरस रही हैं कब से कलियाँ
वन उपवन हैं प्यासे
सूखी रेत नदी लगती है
जल कर कूप तराशे
पुरवा की ग्रीवा पर बूँदें
मोती जैसे हारों के सखि !

करो बतकही मौसम से तुम
सुन लो चाहे मन की
रीझ-रीझ जाती हैं ऋतुएँ
आहट पर सावन की
गजरे बना रही है जूही
होंगे दिन मनुहारों के सखि !

चार वाणियाँ ध्रुवपद की हैं
नवल राग बहुतेरे
तालबद्ध हो करके निकली
सप्तक मन को घेरे
थाप पड़ रही है ढोलक पर
गूँजें सुर सिंगारों के सखि !

झूले पर अब तक बैठा मन
थर-थर काँपे काया
रस भीगी पुरवाई ने लो
नेह रंग बरसाया
पेंगे बढ़ा-बढ़ा कर आते
मादक क्षण अभिसारों के सखि।

Scanned with CamScanner

राजेश सिंह की कविता

राजेश सिंह
जन्म : 03 जुलाई 1975
शिक्षा : एमबीए(विपणन)
व्यवसाय : मुख्य प्रबंधक, राष्ट्रीयकृत बैंक, मुंबई।
संपर्क : - फ्लैट नं. ऐ/303, गौतम अपार्टमेंट, रहेजा टाउनशिप, मलाड(पूर्व) मुंबई-400097
मो.-098337 75798

यह वही मजदूर हैं

ईश्वर ने
पृथ्वी बनाई/ पेड़-पौधे बनाए
जल/हवा/अग्नि बनाए
जीव/जंतु/मनुष्य बनाए
जीवन प्रकट किया पृथ्वी पर

लेकिन...
पृथ्वी पर रहने लायक घर बनाए
मजदूरों ने।
पहनने के लिए/ तन ढकने के लिए
वस्त्र बनाए मजदूरों ने।
पेट भरने के लिए
अन्न उगाया मजदूरों ने।

यह वही मजदूर हैं
जिनके पास रात बिताने के लिए
सर पर छत नहीं है
पेट भरने के लिए अन्न नहीं है
तन ढकने के लिए वस्त्र नहीं है

इतना पैसा नहीं है
कि सही से इलाज करा सके
इतना पैसा नहीं है कि
फीस भर सके
बच्चों के स्कूलों की।

मैंने देखा है/ मजदूरों को
दो जून की रोटी के लिए
हड्डी-तोड़ मेहनत करते हुए
मैंने देखा है/ तपते ज्वर में/
भरी दुपहरी में
ईट/ गारा/ बालू ढोते हुए
परिवार/ बच्चों का
पेट भरने के लिए
बैल की जगह/कोल्हू में जुतते हुए

मैंने देखा है
धन के अभाव में/मजदूरों को
जिंदा रहने की जद्दोजहद करते हुए
तिल तिल कर मरते हुए।

जबकि हर निर्माण के पीछे
हर भव्यता के पीछे
चाहे खाने की हो/रहने की हो/
पहनने की हो
या देखने की हो
खून पसीना रहता है मजदूर का
इन सब के पीछे
थोड़ा-थोड़ा मजदूर रहता ही है
जो इमारत की नींव की तरह
कभी दिखाई नहीं देता।

इतिहास में मजदूरों ने
इबारतें तैयार की
पर नहीं लिखा है
इन इबारतों पर किसी मजदूर का नाम
आज जैसी दुनिया है
दुनिया को यहां तक पहुंचाने में
बहुत सारे अदृश्य मजदूरों का
लगा है खून पसीना।

जिंदा रहने के लिए
सदियों से मजदूर संघर्ष करता आ रहा है
संघर्ष ही करता रहेगा आगे भी
संघर्ष ही भूत/वर्तमान और
भविष्य है मजदूरों का।

मजदूर सपने नहीं देखता कल के
क्योंकि सपने आने के लिए
बहुत जरूरी है
पेट का भरा होना।

Scanned with CamScanner

दीपक पंडित की ग़ज़लें

दीपक पंडित
जन्म : 28 अक्टूबर 1952
जन्म स्थान : नागपुर (महाराष्ट्र)
प्रमुख कृतियाँ : कुछ दूर साथ चल, उजालों की हकीकत, दर्द ही दवा है।
संपर्क : -जी-7, फार्चून एन्कलेव कोलार रोड, भोपाल (म.प्र.)
मो.- 9179413444

खेले तीर-कमानों से

खेले तीर - कमानों से।
कब डरते तूफ़ानों से।

नफ़रत का बारूद बिके,
मज़हब की दूकानों से।

चीखें ही सुन पड़ती हैं,
अब दिल के तहख़ानों से।

जो करना वो करते हैं,
कब डरते फ़रमानों से।

जानवर ही लगा करते,
अब बेहतर इन्सानों से।

जाने कौन शिकार बने,
निकले तीर कमानों से।

अपने ही घर में अक्सर,
हम लगते मेहमानों से।

पास आती नहीं बुलाने पर

कर रहे वार वो ज़माने पर,
तीर लगता नहीं निशाने पर।

किसलिए दरबदर फिरा करते,
लोग मिलते नहीं ठिकाने पर।

बिजलियाँ कब रहम किया करतीं,
है नज़र देख आशियाने पर।

उठ गया ऐतबार दुनिया से,
जुट गयी जो हमें मिटाने पर।

ज़िन्दगी के अजीब नख़रे हैं,
पास आती नहीं बुलाने पर।

बाढ़ का यह कहर न पूछो तुम,
कट गई हर नदी मुहाने पर।

ख़ुद हवायें जिन्हें बचाती हों,
वो दिये कब बुझे बुझाने पर।

किसलिए उनका

कब वो फूलों की बात करते हैं।
बस बबूलों की बात करते हैं।

खूँटियों पर ही टांग रखते हैं,
जो उसूलों की बात करते हैं।

वो शराफ़त का ओढ़कर झाबा,
गर्द-धूलों की बात करते हैं।

किसलिए उनका एतबार करें,
वो जो कूलों की बात करते हैं।

जब ये सावन ही रूठ बैठा है,
आप झूलों की बात करते हैं।

लोग कब उनको देख पाते हैं,
बस रसूलों* की बात करते हैं।

हौसले जिनके पास होते हैं,
कब वो शूलों की बात करते हैं।

मोहब्बत के घराने में

मोहब्बत के घराने में कभी नफ़रत न पैदा हो।
वफ़ाओं के परिन्दों में कभी हिजरत न पैदा हो।

ख़ुदी की कर हिफ़ाज़त तू, मुसीबत से न अब डर तू,
तुझे बरबाद करने की कहीं ताकत न पैदा हो।

भरोसा जिसपे कर बैठे, उसी ने तुमको लूटा है,
मिटा दो आज दुश्मन को, कोई हरक़त न पैदा हो।

चली हैं आँधियाँ जम के, घटाओं ने भी घेरा है ,
जहाँ है आशियाँ तेरा, वहाँ शामत न पैदा हो।

बसाया ये जहाँ तुमने बड़ी ही मेहनतों से है,
करो सब काम तुम अच्छे, कोई ज़िल्लत न पैदा हो।

Scanned with CamScanner

आलेख

डॉ. प्रेम प्रकाश जौहरी एवं उनकी शिक्षण पद्धति

– प्रो. सुधा अग्रवाल

आज गुरूपूर्णिमा के पुनीत पर्व के अवसर पर मैं अपने गुरू परम आदरणीय डॉ. प्रेम प्रकाश जौहरी जी को पूर्ण श्रद्धा के साथ नमन करते हुए आपके सानिध्य में बिताए गए समय, प्रशिक्षण, गायकी एवं संस्मरण के सागर में आकण्ठ डूब गई हूँ। मैंने बी0ए0 प्रथम श्रेणी के साथ उत्तीर्ण किया ही था कि मेरठ के स्थापित इस्माईल कन्या महाविद्यालय की प्राचार्या जी ने संगीत प्राध्यापिका के रूप में मुझे नियुक्ति दे दी क्योंकि मैं उसी महाविद्यालय की एक निपुण छात्रा के रूप में जानी जाती थी। यद्यपि मैंने वस्तुत: तब तक कक्षा में सीखने के अतिरिक्त किसी गुरू से विधिवत शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। मैं मन ही मन बहुत चिंतित थी कि क्या मुझसे एक कक्षा पीछे बी0ए0 की छात्राओं को मैं सिखा पाऊंगी? सौभाग्यवश तभी रघुनाथ कन्या महाविद्यालय द्वारा संचालित 'संगीत कला केन्द्र' की सांयकालीन कक्षाओं के विषय में जानकर 'संगीत विशारद्' की परीक्षा हेतु वहां मैंने प्रवेश ले लिया क्योंकि उस समय प्राध्यापक के लिए बी0ए0 के साथ संगीत विशारद की डिग्री आवश्यक योग्यता थी। वहां आदरणीय गुरूजी कक्षाएं लेते थे तभी मुझे आपसे सीखने का अवसर प्राप्त हुआ। यह सन् 1961 की बात है। इसके पश्चात आपके मार्गदर्शन में मैंने संगीत प्रभाकर, संगीत विशारद, संगीत प्रवीण तथा संगीत अलंकार की परीक्षाएं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कीं। ये परीक्षाएं उस समय मेरठ में नहीं हुआ करती थीं अत: आप मुझे परीक्षाएं दिलाने अलीगढ़ तथा गंधर्व महाविद्यालय दिल्ली लेकर गए थे। इस प्रकार आप मेरे प्रथम गुरू तथा मैं मेरठ में आपकी प्रथम शिष्या के रूप में जानी जाने लगीं।

मेरठ में गुरुजी का आगमन व संगीत के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान:-

गुरुजी का संगीत के प्रति गहरा लगाव था। आपका बचपन अत्यन्त संघर्षपूर्ण रहा। गहरी लगन और कुछ बनने का जुनून उन्हें इस मुकाम तक लाया। इसी कारण आप पूर्ण समर्पित, मेहनती, अभ्यासी और भावुक शिक्षक के रूप में स्थापित हुए। मेरठ आने से पूर्व आप कुछ वर्ष जयपुर में कार्यरत थे तत्पश्चात् 1961 में रघुनाथ कन्या महाविद्यालय में संगीत विभाग में आप नियुक्त हुए तथा जीवनपर्यन्त इस शहर को संगीत के क्षेत्र में अग्रणी बनाने और शिष्य समूह तैयार करने में अपने महती योगदान दिया। यह मेरठ के इतिहास में बड़ी ही विलक्षण और आश्चर्यजनक बात है जिस पर सहसा विश्वास नहीं होता। आपकी शिक्षण पद्धति से आपकी ऐसी उत्कृष्ट छवि निर्मित हुई कि न केवल मेरठ के समस्त इण्टर कॉलिजों की संगीत शिक्षिकाएं वरन आसपास के शहर हापुड़, मोदीनगर, मुरादनगर, मुजफ्फरपुरनगर तथा सहारनपुर तक की संगीत शिक्षिकाएं आपसे शिक्षा ग्रहण करने आने लगीं फलस्वरूप मेरठ में संगीत का ऐसा शानदार वातावरण बन गया कि जिसकी सहज में तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। इसी से प्रभावित होकर मेरठ विश्वविद्यालय की स्नातकोत्तर कक्षाएं प्रारम्भ हुईं और फिर गुरुजी के निर्देशन में निरंतर शोधकार्य ने संगीत जगत में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया।

उत्तम प्रशिक्षण एवं वाग्गेयकार :-

गुरुजी का संगीत शिक्षण का तरीका अत्यन्त विशद एवं गंभीर था। आप रागों की गहराई में जाकर उनका स्वरूप , चलन, भाव एवं संचालन का विवेचन इतनी कुशलता से समझाते थे कि राग हस्तकमलवत से साकार होकर मनोमस्तिष्क में घर कर जाता था। प्रत्येक राग की एक से अधिक बंदिशें, समप्रकृतिक रागों में अंतर,

Scanned with CamScanner

बोल, आलाप, तानें सभी अपनी कल्पना से विस्तार करना आपने हमें प्रारम्भ से ही सिखाया फलत: हमारी समझ विस्तृत होती चली गई। गुरुजी श्रेष्ठ शिक्षक तथा उत्तर वाग्गेयकार भी थे। आपने 'मनहर' उपनाम से अनेक रागों में नवीन हृदयग्राही सब प्रकार की रचनाएं रचीं तथा हमको सिखाईं। कभी-कभी आप किसी राग में ख्याल की बंदिश की स्थायी बनाकर मुझे दे देते थे कि अब इसी के अनुरूप काव्य व बंदिश का अंतरा तुम बना कर लाना। इस प्रकार आपने बंदिश रचना का गुण भी दिया। आपकी अनेक बंदिशें 'संगीत' मासिक पत्रिका तथा 'संगीत कला विहार' में भी प्रकाशित हुईं। आपने 'राग शतक' नामक पुस्तक भी प्रकाशित की यह हस्तलिखित पुस्तक सीमित मात्रा में जेरोक्स कॉपी कराकर खास-खास शिष्यों व मित्रों को वितरित की। मेरा सौभाग्य है कि एक पुस्तक मेरे पास भी है।

संगीत सभाओं के माध्यम से प्रत्यक्ष शिक्षा:-

रागों की तथा प्रदर्शन की बारीकियां समझाने के लिए आप हम शिष्यों को संगीत सभाओं तथा संगीत सम्मेलनों में लेकर जाते थे। साथ बिठाकर रागों की विशेषता, प्रदर्शन की कला, कलाकार की मानसिकता व स्वभाव का उनके प्रदर्शन पर प्रभाव समझाते तथा पूछते थे। हम लोगों को लेकर अनेक बार मेरठ से दिल्ली रेडियो संगीत सम्मेलन तथा गांधर्व महाविद्यालय मंडल के वार्षिक अधिवेशनों में जाते थे। आपके साथ हमने पं. ओंकारनाथ ठाकुर, पं. भीमसेन जोशी, श्रीमती लक्ष्मीशंकर, पं. निखिल बैनर्जी, उ. विलायत खां, पं. किशन महाराज जैसे अनेक उद्‌भट संगीतिज्ञों को सुना।

षडज साधना व मासिक गोष्ठियां :-

प्रति रविवार को सुबह सवेरे 8 बजे गुरुजी के घर पर सभी शिष्यगण एकत्रित होकर एक घण्टे तक षडज साधना करते थे। उस सात्विक वातावरण का वर्णन शब्दातीत है उसे केवल महसूस ही किया जा सकता था। प्रत्येक माह के अंतिम रविवार को संगीत गोष्ठी का आयोजन किया जाता था जिसमें एक शिष्या का गायन होता था जिसको पहली गोष्ठी में ही घोषित कर दिया जाता था ताकि वह पूरे माह मंच प्रदर्शन की तैयारी कर सके तत्पश्चात् गुरुजी के गायन का कार्यक्रम होता था। इस प्रकार विभिन्न कॉलोनियों में कार्यक्रम आयोजित करने से आस-पास रहने वालों में संगीत के प्रति रूचि जाग्रत करना तथा छात्र-छात्राओं को मंच प्रदर्शन के लिए तैयार करना एक तीर से दो शिकार हो जाते थे।

'झंकार' व 'संगीत संकल्प' की स्थापना:-

उपरोक्त क्रम में ही आपने 'झंकार' नामक संस्था प्रारम्भ की जिसमें संगीत के क्षेत्र में लगन व निष्ठा से रियाज करके नाम करने वाले कलाकारों के कार्यक्रम आयोजित किए जाते रहे। कुछ समय पश्चात् आपके सुयोग्य शिष्य 'संगीत मासिक पत्रिका' के सहसंपादक डॉ. मुकेश गर्ग ने आपकी प्रेरणा व सहयोग से ''संगीत संकल्प'' की स्थापना की जो निरन्तर प्रगति करके राष्ट्रीय स्तर तक स्थापित हुई। देश के विभिन्न शहरों में इसकी शाखाएं खुलीं तथा प्रतिवर्ष राष्ट्रीय स्तर के त्रिदिवसीय अधिवेशन अत्यन्त सफलतापूर्वक आयोजित हुए। कोटा में भी सन् 2003 में त्रिदिवसीय सप्तम राष्ट्रीय अधिवेशन का आयोजन स्थानीय संस्था 'संगीतिका' के सहयोग से किया गया जिसमें विभिन्न राज्यों के अनेक शहरों के संगीत, गायक, वादक व संगीत प्रेमियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। लगभग 80 प्रतिनिधि विभिन्न स्थानों से एकत्रित हुए थे। गुरूजी जीवनपर्यन्त इस संस्था के अध्यक्ष पद पर रहे। संकल्प की लगभग 40-50 शाखाएं पूरे देश में हैं।

रियाज के लिए प्रोत्साहन :-

इस प्रकार की विलक्षण शिक्षण विधि से गुरुजी अपने छात्र-छात्राओं को तैयार करते थे। इसके साथ ही आपका अपने शिष्यों को रियाज़ के लिए प्रोत्साहित करने का बड़ा ही अनूठा एवं विलक्षण तरीका था। इस्माईल कॉलेज में बी0ए0 में एक छात्रा थी सुनीता सक्सेना। वह बहुत तैयार गा रही थी। तबला भी सीखा था तथा बचपन से ही संगीत की शिक्षा बाकायदा प्राप्त कर रही थी। तब तक मैं गुरुजी से घर पर सीखना प्रारम्भ कर चुकी थी। सुनीता की प्रतिभा से प्रभावित होकर मैंने उसे घर पर हमारे गुरुजी से सीखने का परामर्श दिया। इस प्रकार उसने गुरुजी से घर पर सीखना प्रारम्भ कर दिया। यह मेरे लिए बड़ी अटपटी स्थिति थी। वह मेरी शिष्या भी थी और गुरु बहन भी। गुरुजी मुझसे कहते ''तुम्हारी शिष्या तुमसे अधिक रियाज 8-8घण्टे करती है। तुम नहीं करती हो, तुम्हें अच्छा लगेगा क्या, अगर वह तुमसे बेहतर गाए? उधर सुनीता को कहते ''सुधा आठ-आठ घण्टे रियाज कर रही है तुमको रियाज बढ़ाकर आगे आना है।'' हम दोनों जब आपस में मिलते तो यह राज़ खुला जाता क्योंकि तब तक लगभग समान आयु, विचार व ध्येय एक ही होने के कारण मित्र बन चुके थे। इस प्रकार सिखाने के साथ इस बात का श्रेय भी है कि आपने हमारे अंदर संगीत तथा रियाज़ के प्रति जुनून जगाया।

जीवन की मार्मिक अविस्मरणीय घटना :-

गुरुजी के जीवन की एक घटना बड़ी ही मार्मिक एवं अविस्मरणीय है। आप प्रारम्भ में उस्ताद फैयाज खां तथा उस्ताद शराफत हुसैन खां से प्रभावित थे तथा आगरा घराना का गाना गाते व सिखाते थे परन्तु कुछ समय पश्चात् परम आदरणीय उस्ताद अमीर खां साहब के गायन ने आपका मन मोह लिया तब आपको ऐसा लगा कि यही असली गायकी है। आपने पूरी लगन से एकलव्य के समान उस्ताजी की गायकी की साधना पूर्ण एकाग्रता, संदेवनशीलता, ईमानदारी, पूर्ण निष्ठा से की जिससे सकारात्मक ऊर्जा तथा स्थायी और गहरा आनंद प्राप्त हुआ। हमने आपसे यही गायकी सीखी।

Scanned with CamScanner

प्रसिद्ध लेखक पाउलो कोएलो की एक उक्ति यहां बहुत सामयिक है कि अगर आप किसी चीज़ को शिद्दत से चाहें तो पूरी कायनाम उस इच्छा को पूरा करने में आपकी मदद करती है। एक ऐसा संयोग हुआ कि आदरणीय खां साहब का गायन काश्मीर में था और उसी समय आप गांधर्व मण्डल की परीक्षा लेने वहां गए थे, जैसे ही आपको ज्ञात हुआ तो आप सुबह सवेरे उस्तादजी से उनके होटल में मिलने पहुंच गए। चरण वंदना करके अपना परिचय दिया तथा शिष्य बनाने का विनम्र निवेदन किया। उस्तादजी ने सहृदयतापूर्वक कहा ''कुछ गाकर सुनाओ'' तब आपने पूर्ण समर्पण से राग तोड़ी गाया। खां साहब बहुत प्रसन्न हुए और आपको अपना शिष्य बनाना स्वीकार किया और यह वादा भी किया कि जब वे दिल्ली कार्यक्रम हेतु आएंगे तभी गण्डा बंधन की रस्म अदा करके शिष्य स्वीकार करेंगे। कुछ समय बीता, उस ज़माने में टेलीफोन की सुविधा भी नगण्य थी। आदरणीय खां साहब कार्यक्रम हेतु दिल्ली पधारे तथा वहां से बिना किसी प्रकार की पूर्व सूचना के स्वयं ही गुरुजी के घर पहुंच गए साथ में तबला वादक फैयाज खां थे जो आपको जानते थे। खां साहब को साक्षात् सामने पाकर हैरान, परेशान व स्तब्ध आप खां साहब के चरणों में लिपट कर जार-जार रोए। खां साहब ने प्यार से उठाकर गले लगा लिया तब दोनों ही अश्रुधार बहाते रहे। संध्या समय सभी की उपस्थिति में गण्डाबंधन का पवित्र अनुष्ठान हुआ तत्पश्चात् खां साहब का अप्रतिम गायन हुआ। उस छोटे से कमरे में वह अतुलनीय भावपूर्ण गायन संध्या व गुरु-शिष्य का पुनीत बंधन आज भी आंखों के सामने ज्यों का त्यों साकार होकर गद्‌गद् कर जाता है।

गुरू जी की विशाल हृदयता :-

मैंने सन् 61 से 68 तक गुरुजी से गहन शिक्षा प्राप्त की। सन् 1967 के प्रारम्भ में मेरे गले में 'गॉयटर' नामक बीमारी के कारण अधिक रियाज़ करने पर गले से खून आ जाता था व दिल्ली में डॉक्टरों ने गाना ना गाने तथा ऑपरेशन कराने की सलाह दी थी। मैं गहन निराशा में डूब गई तब गुरुजी ने मुझे बहुत दिलासा दिया तथा वायलिन वादन के लिए प्रेरित किया। वे स्वयं अच्छे वायलिन वादक थे। आपने अपना वायलिन लाकर दिया तथा प्रतिदिन कुछ देर गाने के बाद वायलिन पर रियाज़ कराना प्रारम्भ किया। मेरा मन उसमें रमता नहीं ऐसा मैंने डरते-डरते आप से आग्रह किया क्या मैं सितार पर रियाज़ करूँ? कोई और होता तो शायद नाराज़ होता परन्तु आपने सहर्ष अनुमति देकर सितार पर रियाज़ शुरु करवा दिया। यह आपकी उदारता व हृदय की विशालता ही थी। गायन में रागों के विस्तार की समझ के कारण सितार पर आलाप अंग जल्दी ही रियाज़ द्वारा पकड़ में आ गया तथा शीघ्र ही आपके निर्देशन में मैंने सितार में भी 'संगीत विशारद' की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर ली। संगीत की मासिक गोष्ठी में मेरा सितार वादन रखा गया। तबले पर गुरूजी ने स्वयं ही संगत की। मेरे बाद दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री विनय कुमार जी का सितार वादन था। वे गुरुजी के मित्र थे। उन्होंने स्वयं कहा कि इसे मैं सिखाऊंगा। मेरे पास रविवार को दिल्ली भेज दिया करो परन्तु मुझे बाद में उदास देखकर गुरुजी ने कारण पूछा। मैंने डरते-डरते निवेदन किया कि मुझे उनके वादन से अधिक उस्ताद जमालुद्दीन भारतीय जो आदरणीय पं. रविशंकर जी के शार्गिद हैं-का वादन अच्छा लगता है। काश मैं उनसे सीख पाती। तब एक बार फिर गुरूजी ने अपनी हृदय की विशालता से मेरी प्रार्थना स्वीकारी। मेरे सौभाग्य से उस्ताद जमालुद्दीन जी व गुरुजी जयपुर में एक साथ गांधर्व महाविद्यालय में सिखाते थे अत: मित्र थे। तब मुझे आप अपने साथ उस्ताद जी के दिल्ली के कमलानगर स्थित घर पर लेकर गए और मेरा सितार वादन उन्हें सुनवाया। सुनकर उस्ताद जी ने सहर्ष अनुमति दे दी। तब से मैं शनिवार को दिल्ली जाकर रविवार प्रात: 8 बजे से 12 बजे तक वहां उस्ताद जी से सीखती, उनकी देखरेख में रियाज़ करती थी। सप्ताह में बाकी चार दिन गुरुजी से गायन सीखती थी। इस प्रकार गायन के साथ-साथ मेरी सितार की विधिवत तालीम चली। यह क्रम निरन्तर 68 के मार्च तक चला।

जीवन को दिशा देने हेतु निरंतर मार्गदर्शन :-

सन् 67 के मध्य राजस्थान पब्लिक सर्विस कमीशन की ओर से संगीत के कॉलेज व्याख्याता की वाण्ट्स निकली मैंने उसमें आवदेन कर दिया। नवम्बर में साक्षात्कार की तिथि आने पर आपको बताया। गुरूजी बेहद नाराज़ हुए ''तुम गायन के रियाज़ में नहीं हो इंटरव्यू के अगले दिन 'अलंकार की लिखित परीक्षा है तुम दोनों ओर से जाओगी, मेरा नाम खराब करोगी।'' पहली बार मैंने आपकी अवज्ञा की। मुझे विश्वास और गुरुकृपा पर पूरा भरोसा था। ईश्वर मे मुझे दोनों परीक्षाओं में सफलता दी परिणामस्वरूप आपका आशीर्वाद व आज्ञा लेकर मैंने मार्च 68 में बीकानेर सुदर्शना कन्या महाविद्यालय में व्याख्याता पद प्राप्त किया और मेरठ और गुरुजी का सानिध्य छूट गया परन्तु मैं निरंतर आपके सम्पर्क में रही। पत्रों द्वारा आपका मार्गदर्शन तथा आशीष पाती रही। गायन की शिक्षिका होते हुए भी मैं सितार का रियाज़ करती रही। आपके आशीर्वाद तथा आज्ञा से मैं जोधपुर में प्रसिद्ध सरोद वादक परम आदरणीय गुरु श्री दामोद लाल काबरा जी जो उस्ताद अली अकबर खां साहब के शिष्य थे- से सितार वादन की गहन शिक्षा, तकनीक सीखने जाती रही तथा राजस्थान विश्वविद्यालय से सितार में गोल्ड मेडल लेकर एम0ए0 उत्तीर्ण किया। इसी बीच मेरा स्थानान्तरण कोटा जानकी देवी कन्या महाविद्यालय में हो गया। मैंन सन 68 से 71 तक जोधपुर गुरुजी से सितार की शिक्षा ग्रहण की। साथ ही मेरठ के संगीत क्षेत्र के कार्यकलापों से गुरुजी व प्रिय सुनीता जी के द्वारा सम्बद्ध रही।

गुरुजी द्वारा प्रदत्त संस्कार संगीत की समझ और प्रशिक्षण

Scanned with CamScanner

द्वारा आज तक संगीत के क्षेत्र में राजस्थान में मैंने एक अच्छे शिक्षक के रूप में अपनी छवि बनाई है तथा उन्हीं के चरणचिन्हों पर चलते हुए कोटा में संगीत का वातावरण बनाने, संगीत के कार्यक्रम आयोजित करने का सार्थक प्रयास कर रही हूँ। सन् 1975 से संगीत के स्थानीय शिक्षकों व संगीत प्रेमियों के सहयोग से ''संगीतिका'' नामक संस्था स्थापित की जिसमें त्रैमासिक कार्यक्रमों में देश के ख्यातिनाम गायक वादक पं. हरिप्रसाद चौरसिया, पं. कुमार गंधर्व, श्रीमती परवीन सुल्ताना, पं जसराज, उस्ताद जाकिर हुसैन, उस्ताद हलीम जाफर खां आदि के कार्यक्रम आयोजित करके कोटा में संगीत का अच्छा माहौल बनाया।

गुरूजी के प्रमुख शिष्य :-

आदरणीय गुरूजी के मेरठ के व जयपुर के अनेक शिष्य हैं जो अपने-अपने क्षेत्र में संगीत का अलख जगा रहे हैं और यथासाध्य शिक्षण, गायन, वादन आदि में विशिष्ट पहचान बना रहे हैं। कुछ प्रमुख शिष्यों के नाम हैं- डॉ. सुनीता सक्सेना (शिक्षण, शोध निर्देशिका, आकाशवाणी कलाकार), डॉ. मुकेश गर्ग ('संगीत' मासिक पत्रिका के सम्पादक,शोध निर्देशक , संगीत के आलोचक व लेखक, दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर), श्रीमती उमा गर्ग (गायिका, संगीत व्याख्याता, दिल्ली), श्री राकेश जौहरी (गिटार वादक, गुरुजी के पुत्र, संगीत का सिद्धहस्त रिकार्डिंग का स्टूडियो), श्रीमती स्मृति (गायिका, गुरु जी की पुत्री, संगीत की प्राध्यापिका), श्री बृजभूषण शुक्ल (गायक एवं पार्श्वगायन व निर्देशन -मुम्बई) और जयपुर की सुश्री प्रमिला राव (आकाशवाणी जयपुर की पूर्व असिस्टेंट), श्रीमती रुबी चटर्जी(पूर्व व्याख्याता, जयपुर)।

गुरुजी से दूर रहते हुए भी मैं निरन्तर उनके समीप ही रही व सम्पर्क साधे रही। मेरी पुत्री स्मिता ने भी गायन में संगीत विशारद् तथा सितार में वनस्थली से प्रथम श्रेणी में एम0ए0 किया तथा वहां वह व्याख्याता भी रही। मैंने उसे पी0एच0डी0 करने हेतु जयपुर न भेजकर गुरूजी के पास मेरठ ही भेजा जिसे आपने पुत्रीवत् अपने घर पर ही रखकर शोधकार्य में प्रवृत्त किया। तब स्मिता ने आपके निर्देशन में ''पं. पटवर्धन जी के राग-विज्ञान के सातों भागों का साहित्यिक एवं सांगीतिक विवेचन'' पर शोधकार्य पूर्ण किया। आपके प्रशिक्षण , मार्गदर्शन एवं गहन खोजी दृष्टि की छांव में स्मिता ने जो शोधकार्य किया उसे परीक्षकों द्वारा बहुत सराहना प्राप्त हुई।

शोधकार्य :- आपके निर्देशन में मेरठ विश्वविद्यालय में शोधकार्य अति तीव्र गति से हुआ। संगीत के दसों थाट व उनके रागों का विवेचन, रागांग पद्धति के रागों का तुलनात्मक अध्ययन तथा स्थापित वाग्गेयकारों व शास्त्रकारों का कार्य, उत्तर भारतीय तथा दक्षिण भारतीय संगीत के रागों का तुलनात्मक अध्ययन आदि विषयों पर आपके निर्देशन तथा डॉ. मुकेश गर्ग एवं डॉ. सुनीता सक्सेना के सहयोग से लगभग सत्रह-अठारह शोधपत्र उस काल में लिखे गए। यह कठिन समीक्षात्मक कार्य आपके रागों के सूक्ष्म एवं विशद् ज्ञान का परिचायक है।

ऐसे नि:स्वार्थ , बात के धनी, मेहनती, अच्छे गायक, विलक्षण शिक्षक व मार्गदर्शक थे हमारे आदरणीय गुरु श्री प्रेमप्रकाश जौहरी। आपने हमें जीने की राह दिखाई अपने संगीत ज्ञान को आपने मुक्तहस्त एवं अन्तर्मन से शिष्यों में बांटा जो मस्तिष्क से हृदय तक पहुंचकर जीवन को संगीतमय कर गया। गुरु जी 1 मार्च 2005 को हृदयघात से अनन्तयात्रा पर प्रयाण कर गए। यह हम सब शिष्यों तथा संगीत जगत की अपूरणीय क्षति थी।

आज के दिन मैं हृदय से आभारी हूं गुरुजी की जिन्होंने मुझे जीवन में संगीत की वीथियों में विचरण करना सिखाया और गहन अतुलनीय प्रशिक्षण देकर जीवनपर्यन्त आत्मिक आनंद प्राप्ति का वरदान दिया।

चरणों में शत्-शत् नमन!!

■

पं. सुरेश ताँतेड़ सम्मानित

साँझी संस्कृति संस्था द्वारा संगीत के क्षेत्र में सतत 55 सालों से शास्त्रीय, उपशास्त्रीय, सुगम एवं सिने संगीत के प्रचार-प्रसार, नवाचार प्रतिभाओं को देश के अब तक कोई 4000 से अधिक कलाकारों के साथ मंच प्रदान करने वाले अभिनव कला परिषद, मधुवन के संस्थापक/सचिव पं. सुरेश ताँतेड़ की उल्लेखनीय सेवाओं के लिए सम्मानित किये गए।

Scanned with CamScanner

आलेख

तबला पुरुष, पद्मविभूषण पंडित किशन महाराज

देवेन्द्र सक्सेना 'प्रज्ञापुत्र'

3 सितम्बर, 1923 कृष्ण-जन्माष्टमी को भारत की सांस्कृतिक नगरी वाराणसी में पं. किशन महाराज का जन्म हुआ। कृष्ण जन्माष्टमी के दिन जन्म होने से आपका नामकरण 'किशन' नाम से हुआ। गायन, वादन एवं नृत्य की भक्ति से सराबोर काशी नगरी की परम्परा बहुत प्राचीन है जहां सितार, नृत्य, शहनाई, गायकी तथा संगीत की कई महान आत्माओं ने जन्म लिया। तबले की विभिन्न वादन परम्परा घरानों में 'बनारस घराना' मृदंग एवं नृत्य की भक्तिधारा से प्रभावित रहा। गंगा की गोद, काशी विश्वनाथ एवं संकट मोचन की छत्र छाया में बालक किशन अपने पिता पंडित हरि महाराज एवं पं. कंठे महाराज से बनारस शैली के तबले का गहन प्रशिक्षण लेने लगे। बाल्यकाल में ही आपको पितृ-सुख से वंचित होना पड़ा। अत: शिक्षा दीक्षा की सारी जिम्मेदारी पं. कंठे महाराज पर आई। विद्वान गुरु को लयदार, समझदार और मेहनती शिष्य मिल जाए तो सिखाने का और सीखने का क्रम सफल होने लगता है।

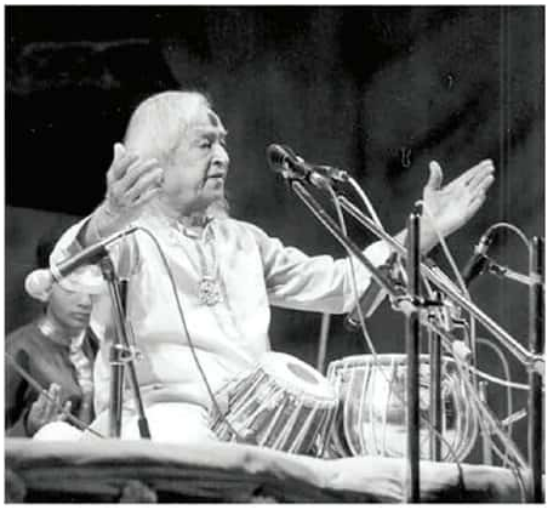

पंडित किशन महाराज ने स्वतंत्र वादन के साथ-साथ गायन, तंत्र वादन एवं कत्थक नृत्य तीनों विधाओं की संगत की विशेष स्वतंत्र शिक्षा अपने गुरु से वर्षों तक ग्रहण की। परिणाम स्वरूप आप युवा अवस्था में अच्छे संगतकार एवं गुरु के रूप में आने लगे। पं. कंठे महाराज ने अपने पास सीखने वाले शिष्यों में से उज्जैन के महंत घराने के पं. नृसिंहदास महंत को पं. किशन महाराज के शिष्यत्व की प्रेरणा दी तो वे शिष्य बनने को तैयार हो गए बाद में अपने पुत्र श्री बालकृष्ण महंत, श्री ललित महंत को किशन महाराज का शिष्य (गंडा बांधकर) बनाया, उसके बाद पं. नृसिंहदास के पौत्र तालमणि-हिमांशु महंत को शिष्य बनाया अर्थात् एक परिवार की तीन पीढियां पंडित किशन महाराज की शागिर्द बनीं। उनके (पं.किशन महाराज) एक वरिष्ठ शिष्य पं. नन्द एवं श्रीमती मंजू मेहता ने अहमदाबाद में हिन्दुस्थानी संगीत का सबसे बड़ा, लम्बा संगीत सम्मेलन शुरू किया। आपकी रुचि तैयारी के साथ-साथ लयकारी में विशेष थी। **आपने एकताल, झपताल, तीनताल, जैसी प्रचलित तालों के साथ-साथ 9, 11, 13, 15, 17, 19 तथा 21 मात्रा की वक्र तालों को बजाने की साधना में खास ध्यान दिया जिससे सीधी-सीधी(बराबर मात्रा वाली तालें) आपको सहज सरल लगने लगीं।**

किसी भी ताल में तरह-तरह की खूबसूरत तिहाइयां, टुकड़े, परण, चक्रदार, उठान आदि वे खूबसूरती व दमदारी के साथ सहजता से बजाते थे। गायन, वादन एवं नृत्य जगत की महान हस्तियां भारतरत्न पं. रविशंकर, भारतरत्न उ. बिस्मिल्लाह खां, भारतरत्न पं. भीमसेन जोशी, नृत्यसम्राट गोपीकृष्ण, पं. शंभू महाराज, पं. ओकारनाथ ठाकुर, पं. बिरजू महाराज, बड़े गुलाम अली खां, फैयाज खां, उ. अली अकबर खां, गिरिजा देवी, सितारा देवी, उ. अमजद अली खां एवं उनके पिताश्री पं. राम नारायण, डॉ. एन. राजम् आदि सभी प्रसिद्ध एवं महान कलाकारों की संगत कर आपने पर्याप्त ख्याति अर्जित की। आप सोलो वादन में भी बहुत लोकप्रिय थे।

भारत व विदेशों में भारतीय ताल वाद्य तबला एवं तबला वादक दोनों की प्रतिष्ठा बढ़ाने में आपका बहुमूल्य योगदान है।

दक्षिण भारत के ताल सम्राटों के साथ आपकी जुगलबन्दी 'ताल वाद्य कचहरी' भी खूब लोकप्रिय हुई। आपके नाम से समारोह के टिकट बुक हो जाते, हॉल भर जाते थे। नृत्य की संगति में आप सबसे यशस्वी लयदार तबला वादकों में अग्रणी थे।

सम्मान : भारत सरकार ने आपकी उल्लेखनीय सेवाओं के लिए **1973 में 'पद्मश्री' तथा 2002 में सीधा 'पद्मविभूषण' सम्मान प्रदान किया। यह सम्मान पाने वाले आप पहले और एक मात्र तबला वादक हैं। (वर्ष 2013 तक),** इससे पूर्व आपको हाफिज

Scanned with CamScanner

अली खां मेमोरिअल ट्रस्ट, सामाप विंतस्त अवॉर्ड, म.प्र.सरकार का 'कालिदास' नेशनल अवॉर्ड, अभिनव कला परिषद, भोपाल का उस्ताद अलाउद्दीन खां संगीत रत्न अवॉर्ड, मधुवन, भोपाल का श्रेष्ठ कलाचार्य व तबला पुरुष अलंकार आदि प्रमुख हैं।

सम्मान के बाद महाराज जी (पं. किशन महाराज) से बनारस पहुंचने पर मेरी बात हुई तो वे बोले- ''यह सम्मान भारतीय संगीत का सम्मान है। तथा उन सभी संगीतकारों का है जिन्होंने सारा जीवन संगीत की सेवा में लगाकर इस संसार में नाम किया। यह सम्मान उन सभी संगीत के आयोजकों को समर्पित है जिन्होंने देश-विदेश में भारतीय संगीत की ध्वजा को सम्हाले रखा है।''

उन्हें वर्ष 2002 में गानसरस्वती किशोरी आमोणकर के साथ 'पद्मविभूषण' सम्मान भारत सरकार द्वारा जब मिला तो (अभी तक यह सम्मान पाने वाले वे पहले और अभी तक आखरी तबला वादक हैं) तब भी उन्होंने अपने साथी मृदंग, तबला वादक जो संसार छोड़ गए को याद किया एवं उन्हें उचित सम्मान न मिलने पर दुख जताया।

पं. किशन महाराज विद्वान तबला वादक एवं मूर्धन्य गुरु थे। 4 मई, 2008 को वे संगीत जगत को अलविदा कर गए और संगीत जगत को अपने होनहार शिष्य दे गए।

शिष्यों के बाद प्रशिष्यों (शिष्य के शिष्य) की भी बड़ी लम्बी सूची हैं, उनमें मैं भी एक हूँ। मैं सौभाग्यशाली हूं कि मुझे पं. किशन महाराज जी बहुत स्नेह करते थे।

भोपाल में एक समारोह में मुझे उनके साथ ट्रेन यात्रा का सुअवसर भी मिला। वे मेरी श्रद्धा भक्ति, लेखनी, आयोजन, जनसम्पर्क प्रतिभा, मिलनसारिता से बहुत प्रभावित थे और मैं उनके आकर्षक व्यक्तित्व, दबंग स्वभाव, पाण्डित्य, समाज सेवा तथा बहु आयामी, ऊर्जावान, हिमालयी व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित था।

महाराज जी कहते थे कि एक कलाकार को सबसे पहले राष्ट्रभक्त होना चाहिए। साथ ही वह प्रकृति, पर्यावरण, खेल, स्वास्थ्य, साहित्य आदि में भी रुचि ले तो जीवन का आनन्द (आनन्द ही परमात्मा) उसे सहजता से प्राप्त होने लगेगा। महाराज जी अच्छी कद काठी के पहलवान, मूर्तिकार, घुड़सवार, निशानेबाज, पतंगबाज, पशुपक्षी, प्रकृति प्रेमी एवं कविहृदय थे।

राष्ट्र एवं समाज सेवा के लिए वे सदैव अग्रणी रहते थे। उन्होंने उ.प्र. बिहार, उड़ीसा बाढ़ भूकम्प पीड़ितों के लिए कई बार आर्थिक योगदान किया। (उन्हीं की प्रेरणा से मैं व मेरी पुत्री आस्था सक्सेना अपनी पुरस्कार राशि राष्ट्र एवं समाज सेवा में खर्च करते हैं।)

ऐसे प्रकाण्ड विद्वान एवं सहृदय कलाकार के अवसान महाप्रयाण से ताल जगत-संगीत जगत जैसे सूना हो गया।

हमें मृत्यु की सच्चाई को नहीं भूलना चाहिए और एक रंगमंच के कलाकार की तरह अपना सफल रोल अदा करके इस संसार से विदाई लेनी चाहिए। जय संगीत!

- के आर-241, सिविल लाइन्स, कोटा-324001 (राजस्थान) मो.-94142 91112

'मध्यप्रदेश में धार्मिक पर्यटन' पुस्तक लोकार्पण

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क से प्रकाशित पुस्तक 'मध्यप्रदेश में धार्मिक पर्यटन' के लेखक वरिष्ठ पत्रकार राममोहन चौकसे की पुस्तक का लोकार्पण मधुवन संस्था के मंच पर रवीन्द्र भवन के सभागार में किया गया। इस अवसर पर संस्था के अध्यक्ष विजय अग्रवाल, पद्मश्री विजयदत्त श्रीधर, वरिष्ठ पत्रकार महेश श्रीवास्तव और मधुवन संस्था के संस्थापक सचिव सुरेश तॉंतेड़ द्वारा किया गया।

Scanned with CamScanner

आलेख

''गुन ना हिरानों गुन गाहक बौरानों है.''

- प्रो. (पं.) सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'

शास्त्रीय संगीत में आजकल ऐसी ही स्थिति देखने में आती है। गुनग्राह्यता बौरा रही है। किसे ग्रहण करें, किसे छोड़ें, यह अंर्तद्वंद मन को विचलित किये है। यह निर्णय कठिन हो रहा है कि शास्त्रीय संगीत में, सीखना क्या है ? हार कर, व्यक्ति टी.वी. चैनल्स, सिने संगीत प्रतियोगिताओं की ओर बेतहाशा दौड़ा जा रहा है। प्रयत्न ये रहता है कि येनकेन प्रकारेण (किसी तरह) उसमें चयन हो जाये। रातों-रात दौलत-शौहरत प्राप्त कर ली जाये। इस प्रक्रिया में पालक भी जी तोड़ कोशिश करने लगते है। यदि आवश्यकता पड़े तो बालक/ बालिका की शिक्षा-दीक्षा की बलि चढ़ जाती है। इतना समय धन, परिश्रम बर्बाद करने के बाद, वही 'ढांक के तीन पत्ते' ही दिखाई देते हैं। इस दयनीय स्थिति पर विशेषकर मुझे बहुत तरस आता है और दु:ख भी होता है। वर्तमान की चकाचौंध इतनी प्रभावी होती है कि व्यक्ति बरबस ही उसकी ओर खिंचा चला जाता है, अपने को रोक ही नहीं पाता।

इस चकाचौंध का दूसरा पक्ष यह है कि व्यक्ति विशेष को यथार्थ के दर्शन हो जाते हैं। उसे समझ में आता है कि अंतत: वास्तविकता क्या होती है। इस वास्तविकता से साक्षात्कार होने के बाद, ही यह समझ में आता है कि आधारभूत (Basic) संगीत शिक्षा के बिना संगीत जगत में कोई भी स्थान प्राप्त नहीं किया जा सकता। यहां तक आने के बाद, शिक्षार्थी का मानसिक स्तर अपने प्रायोगिक स्तर से इतना ऊंचा हो जाता है कि वह संगीत की आधारभूत शिक्षा ग्रहण करने से कतराने लगता है और संगीत शिक्षा में मेहनत और रियाज़ करने से टालमटोल करने लगता है, क्योंकि उसका अहम् जाग जाता है जो संगीत शिक्षा में बार-बार आड़े आता है। इसी अहम् से संगीत-शिक्षा प्रभावित होती है। इसके विपरीत गुणीजनों पर न सिखाने का आरोप लगते रहता है। कुल मिलाकर यही कहावत सामने आती है कि **''दोई दीन से गये पांडे, हलुआ मिला न मांड़े।''**

लेखक, दतिया के प्रसिद्ध संगीत परिवार का है, जिसके पीछे सात-आठ पीढ़ियों की संगीत विरासत है। इस विरासत का उल्लेख स्व. महाराजा पारीछत की छतरी की आंतरिक छत (Roof) में लेखक के संगीतज्ञ पूर्वजों द्वारा दरबार में गायन, वादन प्रस्तुत करते हुये चित्रित तैलचित्र में नामोल्लेख सहित आज भी देखा जा सकता है। (चूंकि छत के आंतरिक भाग पर चित्र अंकित है। इसलिये हवा, पानी आदि से सुरक्षित है और आज भी पढ़ा, देखा जा सकता है।) संगीत विद्या इतनी सरल नहीं है जितनी समझी जाती है। लेखक संगीत परंपरा से भलीभांति परिचित होने के कारण कह सकता है कि संगीत शिक्षा के पीछे कितनी मेहनत और लगन की आवश्यकता होती है। इसके साथ शिक्षार्थी में यदि निष्ठा व समर्पण भाव हो तो 'सोने में सुहागा' का काम करता है।

शास्त्रीय संगीत के इतिहास पर दृष्टि डाले तो उपरोक्त तथ्य स्पष्ट हो जाता है। जिन शिक्षार्थियों में निष्ठा और समर्पण भाव से संगीत शिक्षा प्राप्त कीं। उन्हें धन-दौलत, यश-कीर्ति सभी कुछ प्राप्त हुआ। उनकी संगीत शिक्षा ने परंपरा का रूप ले लिया। ऐसे ही शिष्यों को गुरुजनों ने शास्त्रीय संगीत का खजाना बिना लाग लपेट के सौंप दिया। इन्हीं शिष्यों ने अपनी निष्ठा के आधार से संगीत के घराने स्थापित कर दिये जो सदियों से चले आ रहे हैं। शिक्षार्थियों का आरोप (न सिखाने का) यदि सत्य होता तो ये घराने और परंपरा समाप्त हो जाती, परंतु ऐसा नहीं हुआ।

इस संदर्भ में मेरा मानना है कि गुणीजनों ने जिस कठिन परिश्रम और लगन से संगीत विद्या अर्जित की उसे यों ही कैसे बांट दें। क्या धनी व्यक्ति अर्जित किया हुआ धन किसी को देता है ? फिर संगीत विद्या बिना मेहनत/ परिश्रम के कैसे मिलेगी ? संगीतकार के लिये उसका संगीत ही धन के समान है। उसकी पहचान संगीत से ही है। संगीत को बनाये (Update) रखने के लिये उसे सतत रियाज़ करना अनिवार्य है तभी उसका अस्तित्व स्थापित रह सकता है।

मध्यप्रदेश पूर्व से लेकर अभी तक किसी भी नाम से जाना जाता रहा हो, परंतु संगीत के लिये आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना पहले था। जब-जब संगीत पर विपत्तियों का पहाड़ टूटा, यहाँ के शासनाध्यक्षों और गुणीजनों ने मिलकर संगीत का संरक्षण कर संवर्धन किया। इस संदर्भ में राजा मानसिंह तोमर का नाम सर्वविदित है। उसी प्रकार ख्याल-गायन के संदर्भ में सिंधिया शासकों के गुणीजनों ने ध्रुपद गायकी को ख्याल में इस तरह समाहित किया कि ग्वालियर की ख्याल गायकी को संपूर्ण भारत में मान्यता मिली। आश्चर्य इस बात का है कि जो ध्रुपद गायक थे वे ही ख्याल गाने लगे और स्वयं को चौमुखा गवैया कहलाने में गर्व करते थे, अर्थात् ध्रुपद गायक गिने-चुने ही रह गये। ऐसी स्थिति में पं. विष्णुनारायण-भातखंडे जी ने ध्रुपद को पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप

Scanned with CamScanner

से समाहित किया, जिससे ध्रुपद की बंदिशें संगीत छात्रों के पास सुरक्षित हो गई।

स्वतंत्रता के पश्चात् जैसे-जैसे स्थिति सम्हलती गई, मध्यप्रदेश शासन ने संगीत की दुर्लभ शैलियों को संरक्षण प्रदान किया और उनके केन्द्र भी स्थापित किये, जिनमें ध्रुपद केन्द्र और कथक केन्द्र प्रमुख है। इसके अतिरिक्त रुद्रवीणा, पखावज, सारंगी एवं टप्पा जैसी दुर्लभ शैलियों के गुणीजनों और शिक्षार्थियों का चयन कर उनकी संगीत-शिक्षा का श्रीगणेश किया। विशेष तथ्य ये हैं कि गुरुजनों को मानदेय तो है ही संगीत शिक्षार्थियों को भी स्कॉलरशिप दी जाती है। उसके सुखद परिणाम भी आये, परंतु इनमें भी ह्रास होने लगा। कुछ बंद हुए कुछ चल रहे हैं या ढोये जा रहे हैं। इसी बीच ख्याल केन्द्र का श्रीगणेश भी हो गया।

इसके अतिरिक्त मध्यप्रदेश शासन संगीत के विभिन्न सम्मान (राष्ट्रीय एवं प्रादेशिक) एवं पुरस्कार प्रदान करता हैं। जिनमें तानसेन सम्मान, कालिदास सम्मान, शिखर सम्मान आदि हैं।

जागरूक गुणीजनों ने निजी स्तर पर संगीत शिक्षा का प्रबंध किया है, जिसमें एक से एक अच्छे उदीयमान कलाकार अपनी प्रतिभा तराश रहे हैं। मध्यप्रदेश में, विशेषकर भोपाल में शास्त्रीय संगीत शिक्षा की स्थिति बेहतर है। मध्यप्रदेश ने हमेशा ही संगीत का संरक्षण और संवर्धन किया। संपूर्ण भारत में संगीत-जगत के कलाकार मध्यप्रदेश आने को लालायित रहते हैं।

मैं गर्व से कह सकता हूँ कि भारत में मध्यप्रदेश ही ऐसा राज्य है, जिसमें संगीत की अधिकतम गतिविधियां गतिमान है, जिन्हें संगीत जगत हृदय से स्वीकार करता है। मैं संगीत रसिकों से यह भी कहना चाहता हूँ कि संगीत शिक्षा के लिये अपने विवेक और दूरदृष्टि के उपयोग की आवश्यकता है। यदि ऐसी सोच नहीं पनपती है तो 18वीं सदी के गुणी कादिरबख्श उर्फ 'कादिर' का यह कवित्व बार-बार पढ़ें और समझने की कोशिश करें। इस कवित्व की अंतिम पंक्ति को लेखक ने वर्तमान परिस्थिति के अनुरूप शब्द का परिवर्तन कर शीर्षक बनाया है-

''गुन कों न पूछै कोऊ औगुन की बात पूछें,
कहा भयौ दई कलिजुग यों खरानों है।
पोथी औ पुरान झान ठट्ठन में डार देत,
चुगल चवाइन कौ मान ठहरानों है।
'कादर' कहत जासौं कछु कहिवे को नाहिं,
जगत की रीति देख चुप मन मानों है।
खोलि देखौ हियौ, सब भांतिन सों भांति-भांति,
गुन ना हिरानों गुनगाहक हिरानो है।''

जाने अंजाने आपके मन के सारे प्रश्नों के उत्तर उपरोक्त कवित्व में मिलेंगे।

-97, बी-आनंद भवन, सर्वधर्म कालोनी, सी-सेक्टर, कोलार रोड, भोपाल-462042 ■

श्रद्धांजलि

अटल बिहारी वाजपेयी :
भारत रत्न, पूर्व प्रधानमंत्री, कवि एवं प्रखर वक्ता।
जन्म : 25 दिसम्बर 1924
निधन : 16 अगस्त 2018

मुनि तरुण सागर :
क्रांतिकारी राष्ट्रीय संत 'कड़वे वचन' के प्रवचनकार।
जन्म : 26 जून 1967
निधन : 1 सितम्बर 2018

विष्णु खरे :
वरिष्ठ साहित्यकार, कवि, आलोचक, पत्रकार।
जन्म : 9 फरवरी 1940
निधन : 19 सितम्बर 2018

जसदेव सिंह :
पद्मभूषण, खेल, गणतन्त्र दिवस परेडों के वरिष्ठ प्रखर कमेंटेटर।
जन्म : 18 मई 1931
निधन : 25 सितम्बर 2018

सभी महान आत्माओं को कला समय परिवार की ओर से भावसिक्त श्रद्धांजलि

Scanned with CamScanner

आलेख

विलक्षण संगीतज्ञ : डॉ. लालमणि मिश्र

– आचार्य गिरीश चन्द्र श्रीवास्तव

संगीत के क्षेत्र में सफलता प्राप्त व्यक्तियों को दो श्रेणी में रखा जा सकता है। एक वे जो मंच के सितारे हैं, उनको प्रदर्शनकारी कलाकार(Performing artist) कहते हैं। अधिकतर वे अपनी मस्ती में डूबे रहते हैं, उनको दीन-दुनिया से कम सरोकार रहता है। दुसरे वर्ग में वे शास्त्रज्ञ आते हैं, जो पुस्तकों की दुनिया में खोए रहते हैं। उनको अपना साज छूने से परहेज होता है। वे प्राय: पूर्वजों के सिद्धान्तों को उजागर करने में लगे रहते हैं। वे अधिकतर उन बातों को स्थापित करना चाहते हैं, जिनकी आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उपयोगिता कम या नहीं रह गई है। परन्तु ऐसे बिरले ही होते हैं, जो क्रियात्मक दृष्टि से उच्च-स्तरीय, संगीत शास्त्र पर अच्छी पकड़, सफल अध्यापक, लेखक और वक्ता भी उत्तम हों ऐसे। ऐसी ही व्यक्ति 'संपूर्ण संगीतज्ञ' कहलाने के अधिकारी होते हैं। वे पूर्वजों की विरासत को सीढ़ी बनाकर आगे की सोचते हैं। ऐसे सर्व-गुण-सम्पन्न व्यक्तियों में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के पूर्व प्रोफेसर लालमणि मिश्र का नाम लिया जा सकता है। सन् 1979 में, आपके असामयिक निधन से संगीत जगत को भारी क्षति हुई। आपके निधन को लगभग तीन दशक बीत चुके हैं, परन्तु अब भी आपका स्थान रिक्त है।

प्रो. लालमणि जी कानपुर (उत्तरप्रदेश) के मूल निवासी थे और वहां आपका जन्म अगस्त, 1924 को एक मध्यमवर्गीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब आप मात्र छह वर्ष के थे, नगर में बड़ा साम्प्रदायिक दंगा हुआ। उससे बचने और जीविकोपार्जन के लिए आपके पिता अपने पूरे परिवार सहित कलकत्ता(वर्तमान कोलकता) पलायन कर गए। लालमणि जी की माता को संगीत से लगाव था। अत: आपने अपने बच्चे को हारमोनिअम सीखने के लिए कुछ व्यवस्था कर दी थी। कुछ दिनों बाद ही, एक दिन बालक लालमणि ने वे चीजें हारमोनिअम पर बजाकर सुनाईं, जो उनको सिखलाई नहीं गई थीं। इससे प्रभावित होकर उनके मास्टर मोशाई ने उनको भविष्य में एक बड़ा कलाकार होने की भविष्यवाणी कर दी थी। आयु के बारह वर्ष पूरे करते-करते आपने कई ध्रुवपद, ख्याल, ठुमरी, टप्पा आदि गले में बिठा लिया था। आपको उस समय बड़ा प्रोत्साहन मिला जब आपको एक स्थानीय ग्रामोफोन कम्पनी ने एक सामूहिक गीत की रिकॉर्डिंग में अवसर दिया। जब आप 15 वर्ष के थे तभी पिता की छत्र-छाया उठ गई और आपकी आवाज में भी बदलाव आने लगा। अत: आपने अनुभव किया कि गले में पहले वाला माधुर्य और लोच कहीं खो गई है।

आप कानपुर लौट आए और सितार सीखना शुरू कर दिया। कानपुर से मन उचटा और आप पुन: कलकत्ता (कोलकाता) चले गए। यहां आपकी भेट बिहार के विख्यात ध्रुवपदिए स्वामी प्रमोदानन्द ब्रह्मचारी से हुई। उनसे आपने ध्रुवपद गायन सीखा। साथ-साथ तानसेन के वंशज उ.वजीर खां के शिष्य मेंहदी खां साहब से ख्याल गायन, श्री पाण्डेय जी से बनारसी ठुमरी, श्याम बाबू से तबला वादन और सुखदेव राय से सितार वादन की शिक्षा प्राप्त की।

एक बार आपने सुप्रसिद्ध विचित्र-वीणा वादक उस्ताद अजीज खां का वादन सुना। उससे आप इतने प्रभावित हुए कि आपको लगा कि यही उनके जीवन का अन्तिम पड़ाव है। आपने विचित्र-वीणा वादन प्रारम्भ कर दिया और पांच वर्ष के कठिन अभ्यास से आपने इस वाद्य पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया। साथ-साथ आप सितार, सरोद, जलतरंग, और तबला वादन का भी अभ्यास करते रहे।

मिश्र जी में प्रारम्भ से ही सर्जनात्मक प्रवृत्ति थी। कानपुर जैसे औद्योगिक नगर में आपने संगीत के प्रचार-प्रसार में ऐतिहासिक कार्य किया। आपने 1940-1944 के मध्य यहां चिल्ड्रेन्स म्यूजिक रिसर्च सेन्टर, ऑर्केस्ट्रल सोसाइटी और गांधी संगीत महाविद्यालय की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका, निभाई 1950 से 1954 तक नृत्य सम्राट पं. उदय शंकर की नृत्य मण्डली के साथ संगीत निर्देशक के रूप में आपने यूरोप का भ्रमण किया।

मिश्र जी के जीवन में एक बड़ा बदलाव आया जब संगीत मार्तण्ड पं. ओंकारनाथ ठाकुर के विशेष आग्रह पर आपकी नियुक्ति वाराणसी के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संगीत एवं मंच कला संकाय में सन् 1958 में संगीत वाद्य विभाग में रीडर के पद पर हुई। वाराणसी प्रवास कार्य में मिश्र जी की प्रतिभा और संगीत में जो निखार आया, वह प्रशंसनीय था। मिश्र जी ने निम्न डिग्रियाँ प्राप्त कीं :

1. आगरा विश्वविद्यालय, आगरा से हिन्दी साहित्य में एम.ए.।
2. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद से 'साहित्य रत्न' की उपाधि।
3. सितार और तबला : वादन में बी.म्यूज.।
4. गायन में एम. म्यूज.।

Scanned with CamScanner

5. विचित्र वीणा वादन में डॉक्टरेट ऑफ म्यूजिक की उपाधि।
6. भारतीय संगीत-वाद्य (शोधप्रबन्ध) का पुस्तक के रूप में प्रकाशन हुआ।

आप संगीत संकाय में एक अत्यन्त कुशल अध्यापक के रूप में छात्र-छात्राओं में लोकप्रिय रहे। आपकी एक वरिष्ठ शिष्या श्रीमती डॉ. पुष्पा बसु जी ने अपनी पुस्तक 'राग रूपांजलि' में एक स्थान पर आपके व्यक्तित्व के विषय में लिखा है, 'प्रो. मिश्र का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली था। गौर वर्ण, उन्नत ललाट, श्वेत घनी केशराशि, होठों पर मुक्त खेलती मुस्कान, सम्पूर्ण व्यक्तित्व में ऐसा ओज और तेज था कि अधिक देर तक दृष्टि उठाकर उनसे बात करने में दृष्टि नहीं टिकती थी।' किसी के लिए इन शब्दों में अपना भाव प्रकट करना, सरल नहीं है। ये शब्द हृदय के अन्त:तल से निकले शब्द हैं। ऐसे थे प्रो. मिश्र। आपके शिष्य/शिष्याओं का समूह विशाल था। उनमें से कुछ प्रमुख शिष्यों के नाम हैं: प्रो. पुष्पा बसु, मिश्र जी के पुत्र श्री गोपाल शंकर मिश्र, सर्वश्री ओम प्रकाश चौरसिया, राम शास्त्री, सुधाकर भट्ट, आनन्द शंकर (सुपुत्र उदय शंकर जी) उनके अतिरिक्त गणेश शंकर तिवारी, स्व. श्रीमती निर्मला सक्सेना एवं देशी-विदेशी छात्र जो विभिन्न विश्वविद्यालयों में शिक्षा में रत हैं।

प्रो. मिश्र ने संगीत जगत को पुस्तकों के रूप में निम्न उपहार दिए हैं: 'भारतीय संगीत वाद्य', 'तन्त्री नाद', तीन भागों में 'संगीत सरिता', दो भागों में 'तबला विज्ञान', 'श्रुति वीणा' आदि। आपने अपनी कक्षा में विभिन्न स्वरचित गतें सिखलाईं। जो विभिन्न तालों में निबद्ध थीं। आपकी शिष्या डॉ. पुष्पा बसु जी ने उन सभी बंदिशों को अपनी पुस्तक 'राग रूपांजलि' में संग्रहित करके आने वाली पीढ़ी पर बड़ा उपकार किया है।

प्रो. मिश्र जी एक दूरदर्शी और रचनाकार व्यक्ति थे। आपके अथक प्रयास से ही वाराणसी में 1975 के शिवरात्रि से ध्रुवपद मेले का आयोजन प्रारम्भ हुआ, जो अभी तक निरंतर होता आ रहा है।

आप पहले विद्वान थे जिन्होंने प्रचलित वाद्यों के वर्गीकरण में एक नवीन वर्ग 'तरंग वर्ग' जोड़े जाने की वकालत की। इस वर्ग में जलतरंग, काष्ठ तरंग, नलतरंग, तबलातरंग आदि आते हैं।

मिश्र जी की सोच थी कि संगीत के तकनीकी शब्दों की परिभाषा का ऐसा मानकीकरण होना चाहिए जो सर्वमान्य हो। वह भी एक वृहद् राष्ट्रीय कार्य था। यह उनके जीवन-काल में साकार न हो पाया। इसकी जानकारी लेखक को उस समय हुई जब 1980 के सेमिनार में उसे भाग लेने का अवसर मिला और विदुषी डॉ. प्रेमलता शर्मा जी ने स्वयं यह जानकारी दी।

अपने संकाय में संगीत के उत्थान के लिए प्रत्येक गुरुवार

को अध्यापक/छात्रों द्वारा संगीत सभा का आयोजन प्रारम्भ किया। आपकी योजना थी कि संकाय में संगीत वाद्यों का एक संग्रहालय बने। खेद है कि यह कार्य अभी तक अधूरा पड़ा हुआ है।

आपके उत्कृष्ट विचित्र-वीणा वादन के लिए 1972 में उ.प्र. संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ ने पुरस्कृत किया। विदुषी प्रेमलता शर्मा ने उनके वीणा वादन के सम्बन्ध में कहा था कि ''मिश्र जी अनेक वाद्यों के कुशल वादक होते हुए भी विचित्र-वीणा के रस-सिद्ध कलाकार हैं।''

मिश्र जी के विदेश भ्रमण के विषय में भी कुछ चर्चा कर लेनी चाहिए। आपका प्रथम विदेश भ्रमण महान् नर्तक पं. उदय शंकर की नृत्य-मंडली के साथ, संगीत निर्देशक के रूप में हुआ। उस समय आपने युरोप के विभिन्न देशों का दौरा किया। आपकी दूसरी यात्रा सन् 1969 से 1977 के बीच अमेरिका के एक विश्वविद्यालय में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में हुई। उस समय आपने सितार के कई कार्यक्रम भी दिए और अनेक विदेशी छात्र/छात्राओं को सितार वादन सिखलाया।

प्रो. मिश्र को एक पुत्र और एक पुत्री थी। पुत्र डॉ. गोपाल शंकर मिश्र एक प्रतिभाशाली कलाकार थे। पिता के समान वे भी सितार और विचित्र-वीणा के कुशल वादक थे। 1999 में आप एक कार्यक्रम में भाग लेने हेतु भोपाल गए। वहां पर जानलेवा दिल का दौरा पड़ा और आपकी मृत्यु हो गई। पुत्री डॉ. (श्रीमती) रागिनी त्रिवेदी मध्यप्रदेश के इन्दौर शहर में किसी कॉलेज में सितार की अध्यापिका हैं। खेद है ऐसे प्रगतिशील संगीतज्ञ संगीत संकाय की सेवा केवल 20 वर्षों तक ही कर सके। एक लम्बी बीमारी के बाद आपका निधन 17 जुलाई, 1979 को वाराणसी में हो गया।

- बी/629, गुरु तेग बहादुर नगर, इलाहाबाद- 211 016, मो.-94517 90785

Scanned with CamScanner

पुस्तक विमर्श

अपूर्व सिद्ध हुई मेरी पुस्तक : 'शास्त्रीय संगीतकारों पर हास्यदृष्टि!'

– निर्मिश ठाकर

'कला समय'(संगीत विशेषांक) के लिए लेख भेजने का निमंत्रण मिला तो मैं दुविधा में पड़ गया कि क्या लिखूँ और क्या छोड़ूँ? अजराडा घराना के दिग्गज तबलावादक स्व. श्री सुधीर कुमार सक्सेना जी किसी जमाने में मेरे गुरु रह चुके थे। अनेक शास्त्रीय एवं सुगम संगीत कलाकारों के साक्षात्कार मैं कर चुका हूँ। विदेशों में भी सुगम संगीत (गायन) के मेरे कार्यक्रम हो चुके हैं। दुविधा तो होगी कि क्या लिखूँ?

अचानक मुझे मेरी अनूठी पुस्तक 'शास्त्रीय संगीतकारों पर हास्यदृष्टि!' का स्मरण हो आया। 'पार्श्व पब्लिकेशन'(अहमदाबाद) द्वारा गुजराती में प्रकाशित की गयी ये पुस्तक (वर्ष-2013) को, 'लिम्का बुक ऑफ रिकोर्डज़' ने 'भारत में प्रथम' घोषित कर दी थी और अनेक संगीत कलाकारों तथा कला प्रेमियों की स्नेह वर्षा इस पर अविरत होती रही हैं। मैंने इसे मेरे तबला गुरु श्री सुधीर कुमार सक्सेना जी को 'अर्पण' की है।

यह पुस्तक 'भारत में प्रथम' सिद्ध होने के कुछ मज़बूत कारण हैं। सामवेद में यह स्पष्ट किया गया है कि प्रथम एकाक्षरी शब्द तथा सुर 'ऊँ' है और संगीत के जन्मदाता हैं भगवान शिव। यह पुस्तक का आरंभ लेख 'शिव उर्फ नटराज' से होता है। आगे बढ़ते हुए, पखावज का विभाजन कर 'तबला' का सृजन करनेवाले अमीर खुसरो, सूरसम्राट तानसेन तथा बैजु बावरा प्रवेश करते हैं। बाद में जन्म वर्ष के क्रमानुसार अतिप्रसिद्ध साहित्यकारों के लेख आते रहते हैं। उनमें से कुछ नाम- पं. विष्णु नारायण भातखंडे, पं. विष्णु दिगंबर पलुसकर, उ. अहमद जान थिरकवा, उ. फैयाज़ खान, सवाई गांधर्व, पं. ओमकार नाथ ठाकुर, एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी आदि। कई विद्वान दिग्गज शास्त्रीय संगीतकारों से मेरी मुलाकातें होती रही हैं और उनके साक्षात्कार भी करता रहा हूँ। मेरे बनाये उनके व्यंग्यचित्रों पर उनके प्रतिभाव एवं हस्ताक्षर भी प्राप्त किये हैं। उनके साक्षात्कार में एक आवश्यक प्रश्न मैंने अवश्य किया है कि हास्य व्यंग्य एवं व्यंग्यचित्रों को आप कितना पसन्द करते हैं? इस पुस्तक के लेखों में ये विशिष्ट व्यंग्यचित्रों को तथा साक्षात्कार की झलक को भी समाविष्ट किया गया हैं। यह पुस्तक अपूर्व सिद्ध होने का मुख्य कारण है, तमाम लेखों की हास्य-शैली (हास्य दृष्टि!) तथा तमाम कलाकारों के मेरे बनाये व्यंग्यचित्र। (याद रहे, भगवान शिव का व्यंग्यचित्र मैंने नहीं बनाया।) जिनसे मैं रू-ब-रू मुलाकातें कर चुका हूँ, उनमें उ. अल्लाखा खान, पं. शिवकुमार शर्मा, पं. हरिप्रसाद चौरसिया, उ. अमजद अली खान, उ. झाकिर हुसैन, डॉ. सुहासिनी कोरटकर, प्रो. सुधीर कुमार सक्सेना, डॉ. एन.राजम्, बिरजू महाराज, शुभा मुदगल, पं. जसराज आदि मुख्य हैं। मैं खुद को सौभाग्यशाली मानता हूँ कि डॉ. सुहासिनी कोरटकर, मेरे गुरु जी प्रो. सुधीर कुमार सक्सेना तथा अति प्रसिद्ध गायक श्री मन्ना डे के प्रशंसा पत्र भी इस पुस्तक में शोभायमान हैं। अपवाद स्वरूप घटना यह भी है कि जिनका मैं सदैव चाहक रहा हूँ, वह महान गायिका स्व. श्री किशोरी अमोनकर कार्टून कला को कला नहीं मानती थीं और उनका व्यंग्यचित्र बनाने के लिए उन्होंने मुझे फोन पर बहुत-बहुत डाँटा था।

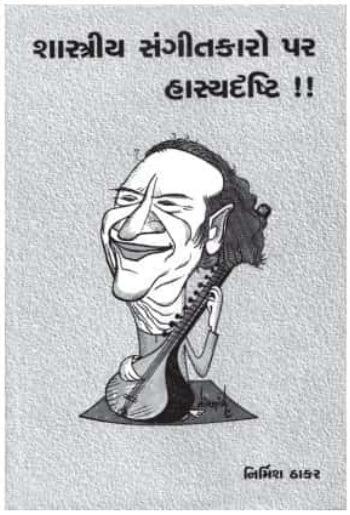

मेरा परम सौभाग्य कि ज्यादातर शास्त्रीय संगीतकारों का इस पुस्तक को भरपूर स्नेह मिला और 'लिम्का बुक ऑफ रिकार्डज़' ने इसे भारत में प्रथम तथा एक मात्र माना, अस्तु।

– बी 64, हेरिटेज बंगलो, साईन्स सीटी रोड, अहमदाबाद-340060 मो.-94266 14631

Scanned with CamScanner

संस्था आयोजन

'संगीत कला निकेतन' जयपुर में रंगारंग सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ

– पं. विजय शंकर मिश्र

..... पद्म भूषण और ग्रैमी अवार्ड से सम्मानित विश्व विख्यात मोहन वीणा वादक पंडित विश्व मोहन भट्ट के मार्ग दर्शन मे चल रही संस्था संगीत कला निकेतन ने विगत दिनों अपने पिता और प्रथम गुरु पंडित मनमोहन भट्ट की पुण्य स्मृति में जयपुर में एक रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम और सम्मान समारोह का भव्य आयोजन किया। दुखद यह रहा कि समारोह के लगभग एक पखवाड़े पूर्व ही उनके बड़े भाई पंडित रवि मोहन भट्ट और उनकी पत्नी का निधन हो गया था किन्तु चूंकि सारी तैयारियां हो चुकी थी और दूर दूर से आने वाले लोगों का टिकिट आदि भी हो चुका था इसलिए कार्यक्रम नियत तिथि पर ही हुआ। 'शो मस्ट गो ऑन' की परम्परा का पालन किया गया। इस समारोह में देश के संगीत सेवी, 24 विभूतियों को सम्मानित किया। इनमें गायक, वादक, लेखक, समीक्षक और आयोजक सभी शामिल थे. इन 24 लोगों में से 6 लोगों को लाइफ टाइम अचीवमेंट अवार्ड दिया गया तो 18 लोगों को पंडित मनमोहन भट्ट स्मृति सम्मान।

संगीत संध्या का शुभारंभ मुंबई की मनीषा ए. अग्रवाल की प्रस्तुतियों, 'सुर की घूँघरु बांध पैर में आज श्याम मैं नाचूंगी', 'माई रि सपनों मे गोपाल' और मीरा का भजन 'बसो रे मोरे नैनन में नंदलाल' से किया। इसके बाद अभय रुस्तम सोपीरी ने अपने संतूर पर एक अप्रचलित राग 'रागे श्री कौंस' की भावपूर्ण अवतारणा की। अभय के पिता और गुरु पंडित भजन सोपीरी ने अपने स्वप्निल प्रयोगों और अनुसंधानों के बलबूते वीणा को संतूर के बराबर स्थापित कर दिया है।

रीतेश और रजनीश मिश्र ने अपने गायन की शुरुआत मौसम के मिजाज को देखते हुए राग मियाँ मल्हार से की। मध्य लय त्रिताल में आली उमड़ घन घुमड़ बरसे रे को गाते समय शब्दों के अनुरूप न केवल स्वरों का अपितु गले का प्रयोग किया, इन भाइयों ने – 'घन, गर्जत, झींगुरवा, छुमछनन' आदि शब्दों को उसी अंदाज में पेश किया। समापन द्रुत एक ताल में निबद्ध एक द्रुत ख्याल से किया – 'घनन घेरी घेरी आए बदरिया'।

पद्मश्री से अलंकृत विश्व विख्यात गायिका विदुषी मालिनी अवस्थी ने जब मंच सम्हाला, 'मोरा सैंया बुलावे आधी रात नदिया बैरन भई' गूँजते ही लगा कि जैसे उनका दर्द, उनकी विवशता सबकी पीड़ा बन गई हो.. मिलन की आकुलता, नदी पार पहुंचने की व्याकुलता, उस पार बसे सैंया की आतुरता और इन सब पर भारी पड़ती उफनती नदी की शत्रुता... 'नदिया बैरन भई'। उनकी अगली रचना भी वियोग शृंगार पर आधारित थी – 'तुमको आने में तुमको बुलाने में कई सावन बरस गये साजन..' इसके बाद अपने आत्मीय आतिथेय पंडित विश्व मोहन भट्ट के आग्रह पर उन्होंने गुलाबी शहर जयपुर को और भी गुलाबी कर दिया यह गाकर – 'रंगी सारी गुलाबी चुनरिया रे मोहे मारे नजरिया संवरिया रे...' उनके इस गीत के साथ तो पूरी महफिल झूम उठी। मालिनी के पास अनेक वरिष्ठ गुरुओं का ज्ञान है, और वे उसका यथासमय उपयोग करती हैं, गाते समय जब वे अपनी आंखों से, भौहों से, होठों से और गर्दन तथा हाथों से अपने शब्दों को अभिनीत कर देती हैं तो ऐसा लगता है कि जैसे हम गाने के साथ ही अभिनय भी देख रहें हैं।

तदोपरांत भट्ट द्वय ने उस्ताद अनवर खान को ही उनके दल बल सहित मंच पर भेजा। उस्ताद को इसी वर्ष केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार के लिए चुना गया है. अनवर खान और उनके साथियों द्वारा प्रस्तुत राजस्थानी भाषा के लोक गीतों ने लोगों का खूब मनोरंजन किया. इस कार्यक्रम की एक बहुत ही बड़ी विशेषता पंडित विश्व मोहन भट्ट का आत्मीय आतिथेय था, जिस तरह से वे अपने सभी कलाकारों को – जो निश्चय ही उनसे कनिष्ठ थे – प्रोत्साहित कर रहे थे...।

उनके यशस्वी सुपुत्र पंडित सलिल भट्ट शुरू से अंत तक – मुहावरों की भाषा में कहें तो एक पैर पर खड़े रहे, सलिल के अनुज सौरव और सुपुत्र सात्विक सहित पूरा भट्ट परिवार अतिथियों के स्वागत सत्कार में जुटा हुआ था। आधी रात के बाद जब कार्यक्रम सम्पन्न हुआ तब क्लार्क आमेर होटल परिवार के सदस्य सुस्वादु भोजन के साथ उपस्थित रहें। शायद इसे ही कहते हैं – सोने में सुगंध।

– 'शंकरा' 705, डी/21 सी वार्ड नं. 3, महरौली, नई दिल्ली-110030
दूरभाष- 011-26641963

Scanned with CamScanner

मन की बात

संगीत में समर्पण जरूरी है

– दामोदर राव

मेरा संगीत के प्रति समर्पण बहुत बाद में हुआ। स्कूल समय में बाल सभा या दोस्तों के बीच गाते-गाते संगीत में कब प्रवेश कर गया पता ही नहीं चला। यार-दोस्तों से तारीफ सुनकर एवं अन्य सभी से यही सुनकर बड़ा होते रहा, मेरे गले की तारीफ सुनते हुए- अरे तुम तो बहुत अच्छा गाते हो, तुम्हें तो संगीत सीखना चाहिये, बचपन से ही मैं अपने पिता स्वर्गीय के. रामइया जो कि आध्यात्मिक गुरु एवं भक्ति संगीत के रसिक एवं गायक भी रहे, वे कई बार कहते थे- ये भजन गाओ, वो भजन गाओ, उस समय मजाक-मजाक में गा दिया करता था। ऐसे चहते सिलसिले में खेलते-कूदते गा लिया करता था, कुछ दिनो बाद मेरे दोस्त एवं स्कूली दिनों के साथी भी संगीत सीखने जाया करते थे, एक दिन मैं भी उनके साथ संगीत क्लास में गया, तो मुझे भी अच्छा लगने लगा। कर्नाटक के पंडित सिद्धराम स्वामी कोरवार, उनके सानिध्य में अपने संगीत की शिक्षा यानी ख्याल गायन की तालीम लेना प्रारंभ कर दिया। गुरुजी को दक्षिणा भी देनी है। मेरे भोजन की व्यवस्था एवं रहने के लिए रूम जिसका किराया भी देना मेरे लिए किसी बड़े पहाड़ खोदने से कम न था, इस तरह का वह कठिन समय था। एक तरफ नौकरी, फिर किसी को संगीत का ट्यूशन करना चालू हो गया। क्या करूँ मैं मजबूर था, उस समय दो भाई-बहन जो बंगाली थे वह महीने के 15 रूपये दिया करते थे, नौकरी से 90 रूपए, कहीं तबला बजा लिया तो 10 रूपए मिल जाया करते थे। सुबह चार बजे उठ कर संगीत का रियास, उसके बाद अपने लिए दो रोटी का प्रबंध कर के सुबह 6:1/2 बजे निकल जाया करता था। 7 बजे से 8 बजे तक भाई-बहन को ट्यूशन कर 8:1/2 बजे (प्राइवेट जॉब) उस कम्पनी के लिए निकल कर 9 बजे से 5 बजे शाम तक नौकरी करके घर आकर नहा-धोकर फिर ट्यूशन कर रात नौ बजे घर पहुंचकर खाना बनाना, खाना, एकाध घंटा गा लेना ऐसा सिलसिला चलता रहा। सालभर ऐसा भी चला कहीं नहाना, कहीं सोना, कहीं सामान रखे रहना, ये सिलसिला भी चला बाद में ईश्वर ने अच्छे दिन दिखाना शुरू कर दिया, छुट-पुट प्रोग्राम या तो किसी के साथ तबला संगत करना या किसी के साथ हारमोनियम या ताल बजाना इससे कुछ पैसों का आवागमन होता रहा बाद में गुरुकृपा से आकाशवाणी केन्द्र भोपाल से 1984 में युवा-वाणी कार्यक्रम शास्त्रीय गायन में सफल घोषित हो चुकने के बाद कार्यक्रम मिलने लगे, बाद में सुगम संगीत में बी. श्रेणी एवं शास्त्रीय गायन में भी 1990 में बी क्षेत्र गायक बन गया, उस समय आकाशवाणी गायक बनना बड़ा सूर वीर बनने के बराबर था, धीरे-धीरे गुरु के चरणों के साथ रह कर, राग-रागिनियों की सूझ-बूझ, उनका चाल-चलन उस राग का कैसा स्वरूप है, गुरुजी इन बातों को अच्छे से समझाया करते थे। इसी करण मैं आज अपने गुरु एवं माता-पिता के आशीष से अपने पैरों पर खड़ा होकर अपने परिवार के साथ जीवन व्यापन करता आ रहा हूँ। अब मैं एक राष्ट्रीय गायक बना हूँ।

अपने पिता से गुरु के साथ रहना कैसे? उन के साथ उठते-बैठते कैसे है? ये सब तालीम पिताजी से ली। गुरु जब कहते थे कि बैठो, तभी बैठते थे। पिताजी का ये कहना था कि 'गुरु के साथ कभी जाओ तो एक कदम पीछे रहकर चलना, हाँ कभी उनके साये के ऊपर पैर न लग जाये' इन सब बातों को सीखने का तालीम मुझे अपने पिता से मिलीं।

भारतीय संगीत को विकास की दिशा में ले जाने के पीछे हमारे महान गुरुजनों का हाथ है और एक बात मुझे आज तक समझ नहीं आयी कि- घराना क्या है? क्योंकि जो भी तबले के पंडित या उस्ताद तिरकिट हो या धिर धिर किट हो, धातिर तातिर या जो भी रेला काददे परन बजते है, ये सभी पंडित एवं उस्ताद बजाते ही है, तिरकिट शब्द ले लेता हूँ, ये सभी घराने को लोग एक जैसा ही बजाते है, हाँ, कम्पोजीशन अपने-अपने विचारों से बजाते है। घराना कहते है, घराने का मतलब है, घर या परिवार मान सकते है। ये एक कलाकार की कम्पोजीशन जिसकी सोच जैसी चलती गयी, उस प्रकार से कम्पोजीशन करते गये। वैसे ही गायन विधा में भी है। किराना घराना, मेवाती घराना, ग्वालियर घराना ऐसे कई घराने है। ख्याल गायन किसी नियमों, बंधनों से जकड़ा हुआ नहीं होता, इस कारण प्रत्येक गायक अपने-अपने योग्यता के अनुसार रंजकता माधुर्यता एवं चमत्कारी ढ़ंग से गाने का प्रयत्न करता है, कोई आलापकारी तो कोई तानों पे जोर देता है, कोई लयकारी, कोई लड़ंत-भिड़त का कार्य गायक करता है, वही गायक अपने शिष्यों को सिखाता है पर वह शिष्य तो क्या अपने पुत्र-पत्री के भी सिखाया जाय एवं जैसा ख्याल गायन में नहीं गा पाते, अंतर जरूर आता है, क्योंकि गुरु के सानिध्य में सीखने के बाद वह गायक अपने विचार यानी अपना ख्याल उसकी सोच भी उसमें आयेगी ही और वह होना भी चाहिए। इसी सिलसिले ने चलते-चलते बाद में घरानों का रूप ले लिया।

– जीवन आनंद अपार्टमेंट, फ्लेट नं.-102, ई-8 अरेरा कॉलोनी, त्रिलंगा, भोपाल(म.प्र.)

Scanned with CamScanner

स्मृति शेष

महान तबलावादक : पंडित कुमार लाल मिश्र

1 सितम्बर को बनारस घराने के तबला का एक और स्तम्भ गिर गया। महान तबलिक पद्म भूषण पंडित सामता प्रसाद उर्फ गुदई महाराज के ज्येष्ठ पुत्र पंडित कुमार लाल मिश्र का निधन शोकाकुल करने वाला है। महाराज जी की वादन परंपरा में वे एकमात्र कलाकार थे जिन्होंने संगीत को गंभीरता और निष्ठा से अपनाया और उन्हें उसका फल भी मिला।

कुमार लाल मिश्र संगीतकारों की महान परम्परा से थे। उनके प्रपितामह पंडित प्रताप महाराज उर्फ परतप्पू जी महान तबला वादक थे। उन्हें वरदान था कि वे जहाँ भी बजाएँगे अपराजेय रहेंगे। उस युग में कोई भी कलाकार उनके बाद गाने बजाने की हिम्मत नहीं जुटा पाता था, लेकिन चूंकि अपने पिता के असामयिक निधन के बाद पंडित सामता प्रसाद ने एक अन्य महान तबलिक पंडित विक्रमादित्य मिश्र उर्फ पंडित बीक्कू महाराज से सीखा था अत: कुमार लाल के गंडा बंधन की औपचारिकता उन्होंने पंडित बीक्कू महाराज के ज्येष्ठ पुत्र तबला शिरोमणि पंडित गामा महाराज के कर कमलों से करवाई थी, इतना ही नहीं समय समय पर न केवल पंडित गामा महाराज बल्कि गायक पंडित महादेव मिश्र के पास भी उन्हे ज्ञान अर्जन हेतु भेजते थे।

उस्ताद विलायत खान के सितार, विदुषी गिरिजा देवी और पंडित राजन- साजन मिश्र के गायन तथा सितारा देवी जैसे अनेक वरिष्ठ संगीतकारों की यादगार और अनुपम संगत कर चुके कुमार लाल चारोपट के तबलिया थे। जिन लोगों ने उनका एकल वादन सुना है उन्हें मालूम है कि अपने पिता की विरासत को उन्होंने ही सहेजने की कोशिश की थी किसी और ने नहीं।

कुमार लाल मिश्र की शिष्या डॉ. रेणु जौहरी इलाहाबाद विश्वविद्यालय में तबले की अध्यापिका हैं और अपने क्षेत्र में अच्छा काम कर रही हैं, एक और शिष्य मुदित नारायण दिल्ली में पंडित सामता प्रसाद जी के नाम पर एक संस्था चला रहें हैं. महाराज जी की स्मृति में संगीत समारोह का आयोजन भी करते हैं, उन्होंने कुमार जी को उनके पुत्र सहित दिल्ली में आमंत्रित भी किया था और उनका स्वतंत्र तबला वादन भी दिल्ली वासियों को सुनवाया था, लेकिन चिंता और दुख की बात यह है कि पंडित सामता प्रसाद उर्फ गुदई महाराज ने जो मुक़ाम अपने बल बूते बनाया था वह अब लगभग ख़त्म सी हो गई है। कुमार लाल मिश्र आकाशवाणी से भी अधिकारिक रूप से जुड़े हुए थे। उन्होंने न केवल एक तबला वादक बल्कि अधिकारी के रूप में भी अपनी सेवाएं वहां दी थी, और वह दौर उनकी लोकप्रियता का था जब उन्हें फिल्मों में काम करने के लिए भी आमंत्रित किया गया था, लेकिन वे अपनी जगह जानते थे इसीलिए वे मंच से अलग नहीं हुए.. सस्ती लोकप्रियता के लिए कीमती कला को नहीं छोड़ दिया। स्वभावत: वे सहयोगी और उदार प्रकृति के थे। मिलनसार थे और किसी भी समय किसी के भी साथ बजाने के लिए तैयार रहते थे। बनारस में पंडित किशन महाराज के निवास स्थान पर उस समय इलाहाबाद से आये लखनऊ घराने के सुप्रसिद्ध कथक नर्तक पंडित ओम प्रकाश मिश्र उर्फ़ बच्चा बाबू के साथ उन्होंने इतनी सटीक संगत की थी कि लगता था जैसे बरसों का साथ रहा हो। कुमार भैया का निधन दुखद इसलिए भी है कि अब इस तरह के कलाकार बनने भी बंद हो गए हैं. जो चला जाता है उसके स्थान की पूर्ति करने के लिए कोई नहीं आ पाता है, लेकिन हम चाहें या न चाहें, मानें या न मानें जो आया है वो जाएगा भी- यही विधि का विधान है.... सृष्टि का नियम है... और इस नियम के आगे हमें सिर झुकाना ही होगा तो इस नियम के आगे सिर झुकाते हुए हम पंडित कुमार लाल मिश्र की पावन स्मृतियों के आगे भी सिर झुकाते हैं और परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वे उन्हें उनके उन्ही कलात्मक गुणों के साथ इस धरती पर पुन: भेजें, जिनके कारण हम उनका वियोग सहन नहीं कर पा रहे हैं. ओम शांति शांति शांति...

यह कुमार लाल मिश्र के तबले का जादू ही था कि वरिष्ठ बांसुरी वादक और संगीत निर्देशक पंडित रघुनाथ सेठ ने उनके तबले से प्रभावित होकर उन्हें और पंडित राम जी मिश्र को बिना आडिशन की औपचारिकता निभाये प्रथम श्रेणी के तबला वादक के रूप में अनुमोदित कर दिया था। आज ऐसे कलाकार और ऐसे कद्रदान कला अधिकारी दोनों का ही अकाल पड़ा हुआ है।

यह एक विडंबना ही है कि दिल्ली जैसे शहर के लोगों ने कुमार भैया को बहुत कम सुना। मैं तो उनका तबला सुनते हुए बड़ा हुआ हूँ। पंडित राजन साजन मिश्र के साथ के एक कार्यक्रम में उन्होंने बीस मिनिट से ज्यादा देर तक केवल लग्गी लड़ी बजाकर समा बांध दिया था। वे बजाते जाते थे और राजन साजन जी प्रशंसा करते हुए उन्हें और अधिक बजाने के लिए प्रेरित करते जाते थे। उन अनुभवों को केवल अनुभव किया जा सकता है लिखा नहीं जा सकता है।

- रपट : पं. विजय शंकर मिश्र ■

Scanned with CamScanner

समवेत

सम्मान सेवा का आभूषण है

'दुनिया की सबसे बडी खोज (इनोवेशन) का नाम है *संस्था*।'

'आधुनिक समाज के विकास का इतिहास ही विशेष लक्ष्य वाली *संस्थाओं* के विकास का इतिहास भी है ।'

'श्री भारतेन्दु समिति' कोटा द्वारा 'साहित्य श्री' सम्मान से अलंकृत

'साहित्य-मण्डल' द्वारा 'सम्पादक रत्न' सम्मान

राजस्थान में कोटा की 'श्री भारतेंदु समिति' तथा श्रीनाथद्वारा की 'साहित्य-मण्डल' संस्थायें अपनी हिन्दी सेवाओं के लिए अपने दस दशकों के परिश्रम और योगदान के लिये जानी जाती हैं । 'श्री भारतेंदु समिति' तथा 'साहित्य-मण्डल' दोनों संगठन अपने 100 वर्ष पूरे करने के बहुत करीब हैं। हिन्दी भाषा के यात्रा अनुभवों को न केवल इन दोनों संस्थाओं ने सहेज कर रखा बल्कि हिन्दी के लिए काम कर रहे व्यक्ति, पत्रिका और संस्थाओं को उचित सामाजिक पहचान मिल सके, इस उद्देश्य के लिए भी वें कटिबद्ध हैं। कला समय के सम्पादक श्री भँवरलाल श्रीवास के अपने 21 वर्षों के परिश्रम के लिए 'श्री भारतेंदु समिति' ने उन्हें दिनांक 9 सितम्बर 2018 को **'साहित्य श्री'** तथा 'साहित्य-मण्डल' ने दिनांक 15 सितम्बर 2018 को **'सम्पादक रत्न'** सम्मानों से अलंकृत किया है। कला समय परिवार इन दोनों संस्थाओं का अत्यंत आभारी है और उनकी अविरल सक्रियता के लिए अपनी शुभकामनायें अर्पित करता है।

डॉ. विजयेन्द्र गौतम एवं आस्था सक्सेना के गायन से श्रोता मंत्रमुग्ध हुए

श्री करणी नगर विकास समिति के आश्रय भवन विकास समिति के आश्रय भवन में संगीत रत्न रामरंग एवं स्वामी पागलदास जयंती पर आयोजित प्रभात संगीत सभा एवं कला समय, भोपाल एवं संगीतिका कोटा के संयुक्त तत्वावधान में सुप्रभात संगीत-सभा में भट्ट परम्परा के गायक डॉ. विजयेन्द्र गौतम एवं सी.सी.आर टी स्कॉलर गायिका आस्था सक्सेना का शास्त्रीय गायन सम्पन्न हुआ।

हिन्दी भवन के नरेश महेता कक्ष में कृति लोकार्पण

समकालीन हिन्दी ग़ज़लकार : एक अध्ययन का लोकार्पण

ग़ज़ल को समर्पित संस्था ग़ज़लायन द्वारा श्री हरेराम समीप द्वारा लिखित पुस्तक 'समकालीन हिन्दी ग़ज़लकार : एक अध्ययन भाग तीन' का लोकार्पण हिन्दी भवन में सम्पन्न हुआ।

एन.एल. खंडेलवाल को 'सम्पादक रत्न' सम्मान

तुलसी मानस प्रतिष्ठान की 'तुलसी मानस भारती' मुखपत्रिका के संपादक एन.एल. खंडेलवाल को साहित्य-मंडल श्रीनाथद्वारा से प्रदत्त 'सम्पादक रत्न' सम्मान मानस भवन में भँवरलाल श्रीवास सम्पादक 'कला समय' ने सौंपा। इस अवसर पर रमाकांत दुबे, प्रभु दयाल मिश्र, कला समय सह-संपादक लक्ष्मीकांत जवणे सहित कई वरिष्ठ साहित्यकार उपस्थित थे।

Scanned with CamScanner

बैतूल में राजकुमार कोरी 'राज़' के मुन्तज़िर का लोकार्पण

एक प्रखर उदीयमान ग़ज़लकार 'राज़' का कांतु दीक्षित, संतोष जैन, सजल मालवीय, प्रो. कोरी, के. के. चौबे, प्राचार्य- खासदेव आदि उपस्थिति रहे।

ध्रुव शुक्ल का रचना पाठ

ललित कलाओं के लिए समर्पित स्पंदन संस्था भोपाल की ओर से दिनांक 10 अगस्त 2018 को स्वराज भवन में हिन्दी के प्रख्यात कवि कथाकार श्री ध्रुव शुक्ल का काव्य पाठ आयोजित किया गया।

म.प्र. के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य पर केन्द्रित 'पहला अंतरा' का विशेषांक लोकार्पित।

'अंतरा' के अंतर्गत काव्य पाठ

राजधानी भोपाल की छांदस विधा को समर्पित संस्था 'अंतरा' 28 अगस्त 2018 को देश के प्रसिद्ध एवं चर्चित ग़ज़लकार महेश अग्रवाल के निवास पर काव्य पाठ का आयोजन सम्पन्न।

कला समय प्रतिनिधि आस्था सक्सेना, कोटा

सांसद ओम बिरला जी, भँवरलाल श्रीवास, कमला कौशिक, आस्था सक्सेना

डॉ.मधु भट्ट तैलंग अध्यक्ष संगीत विभाग, जयपुर (राज.) द्वारा कला समय पत्रिका की आजीवन सदस्यता ग्रहण कराते कला समय पत्रिका के सलाहकार देवेन्द्र कुमार सक्सेना तबला वादक

सुर के, स्वर के, शब्द के, चारों चारु सुधीर। माँ चम्बल की आरती, करते चम्बल तीर।
लेखक रामेश्वर शर्मा 'रामू भैया'
देवेन्द्र सक्सेना, आस्था सक्सेना, संगीता सक्सेना माँ की आरती करते।

आस्था सक्सेना को माननीय मुख्यमंत्री युवा सुराज यात्रा का प्रतीक भेंट कर सम्मानित किया

Scanned with CamScanner

संस्था समाचार

वरिष्ठ साहित्यकार घनश्याम सक्सेना ने संस्था 'कला समय' की ओर से किया अभिनन्दन।

अशोक शाह के कविता संग्रह 'अनुभव का मुँह पीछे है' पर विमर्श

भोपाल। संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा को समर्पित संस्था कला समय द्वारा दिनांक 05 सितम्बर 2018 को स्वराज भवन सभागार में प्रख्यात कवि अशोक शाह के नवीनतम कविता संग्रह अनुभव का मुँह पीछे है पर विमर्श का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में कवि श्री शाह ने अपनी रचना प्रक्रिया पर वक्तव्य देते हुए संग्रह से चुनिंदा रचनाओं का पाठ किया। पुस्तक पर समीक्षात्मक टिप्पणी वरिष्ठ कवि बलराम गुमास्ता, सुपरिचित साहित्यकार लक्ष्मी नारायण पयोधि और कवि-कथाकार लक्ष्मीकांत जवणे द्वारा की गयी। कार्यक्रम का संचालन उर्दू की जानी-मानी कवयित्री डॉ. नुसरत मेंहदी ने किया। उल्लेखनीय है कि भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी अशोक शाह की अबतक कुल 12 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें 08 कविता संग्रह, 03 पुरातत्व पर और 01 दर्शन पर केन्द्रित पुस्तक शामिल हैं। विगत दिनों मध्य भारत के वृक्षों पर केन्द्रित उनकी काव्यकृति जंगलराग अपनी संरचनात्मक विशेषता के कारण काफी चर्चा में रही है। कला समय संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा संस्था द्वारा साहित्य और कलाओं पर केन्द्रित आयोजन लगातार किये जाते हैं। इसी क्रम में संस्था द्वारा यह विशेष आयोजन किया गया। इस अवसर पर शहर के वरिष्ठ साहित्यकार घनश्याम सक्सेना ने संस्था 'कला समय' की ओर से अभिनंदन किया गया तथा गोपेश वाजपेयी द्वारा आभार प्रगट किया गया।

सुधा अग्रवाल का अभिनंदन

श्री करणी नगर विकास समिति के 1008 वें दिवा संगम समारोह में आशा भोंसले के जन्मदिन के अवसर पर कला पुरोधा प्रोफेसर सुधा अग्रवाल के 76 वें जन्मदिवस पर आशा भोंसले के सुरले गीतों की प्रस्तुति गायिका संगीता सक्सेना, आस्था सक्सेना, गायक राजीव मल्होत्रा ने दी। आस्था मेलॉडी ग्रुप व कला समय संस्था भोपाल का सहयोग रहा। कलाकारों में आस्था सक्सेना ने साथी रे भूल न जाना मेरा प्यार, छोटी सी कहानी से बारिशों के पानी से, संगीता सक्सेना ने आगे की जाने न तू पीछे भी जाने न तू, जो भी है बस यही एक पल है, राजीव मल्होत्रा ने कहीं दूर जब दिन ढल जाए, संगीता आस्था एवं संजीव सामूहिक समूह। लेकर हम दीवाना दिल फिरते हैं मंजिल-मंजिल, जैसी प्रस्तुति देकर श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। कार्यक्रम का समापन डॉ. विकास भारद्वाज के सुरीले सितार वादन से हुआ तबले पर घनश्याम राव ने संगत की। कार्यक्रम में की बोर्ड पर सचिन सिंद्या, तबले पर देवेन्द्र सक्सेना ने साथ दिया। समारोह में प्रसन्ना भंडारी ने कला समय के संपादक भँवरलाल श्रीवास, कला कन्या महाविद्यालय की प्राचार्य डॉ. अनीता गुप्ता, दिल्ली की प्रोफेसर डॉ. कमला कौशिक आदि उपस्थित थे। सीएम सक्सेना ने आभार प्रकट किया, प्रोफेसर हरिमोहन शर्मा ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

Scanned with CamScanner

पत्रिका के बहानें

प्रिय श्रीवास जी, सप्रेम नमस्कार। आपके संपादकत्व में निकलनेवाली पत्रिका 'कला समय' के दो अंक (अप्रैल-मई और जून-जुलाई 18) आपसे प्राप्त हुए। अप्रैल-मई का अंक 'विलुप्त होती लोक कलाओं' पर आधारित था तो जून-जुलाई का अंक 'सार्वभौमिक संगीत पर एकाग्र' अप्रैल-मई अंक में लोक-कला को लेकर डॉ. कपिल तिवारी का विश्लेषण एकदम सटीक है कि ''परम्परा से चली आ रही (लोक) कला किसी व्यक्ति विशेष का सृजन नहीं बल्कि एक सामुदायिक सर्जना है। (इसका) आधार लोक जीवन, लोक परम्पराएँ और लोक रीतियाँ रही हैं...निरंतरता ही उसका वास्तविक संरक्षण है। डॉ. महेन्द्र भानावत ने राजस्थान की लोक-कलाओं के विविध पक्षों पर प्रकाश डालते हुए उसके विस्तृत कला रूपों का अच्छा विश्लेषण किया है। चित्रों से आलेख जीवन्त हो उठा है। डॉ. राजाराम ने अपने आलेख में कला-समीक्षकों के सामने एक प्रश्न रखा है कि 'अब समय है जबकि कलाओं का नये सिरे से नये धरातलों पर वर्गीकरण करना आवश्यक है कि कौन-सा कार्य पारंपरिक है, कौन-सा शास्त्र-सम्मत और कौन-सा व्यक्तिपरक?' अंक के और भी लेख सोचने को मजबूर करते हैं। इसी प्रकार जून-जुलाई अंक में भी सार्वभौमिक संगीत की चर्चा में विद्वानों द्वारा विभिन्न संगीत रूपों पर सार्थक प्रकाश डाला गया है। अपने नाम को सार्थक करती हुई, श्रेष्ठ पत्रिका के प्रकाशन के लिए साधुवाद। - **एन.एल. खंडेलवाल,**

प्रिय श्रीवास जी, नमस्कार। 'कला समय' का जून-जुलाई 2018 का अंक मिला। अंक को आवरण पृष्ठ से लेकर भीतरी पृष्ठों तक प्रथमत: देखने पर एक बारगी अहसास हुआ कि मुझे 'कला समय' के जिस वस्तुनिष्ठ कलेवर को देखने की आशा थी, उसकी पूर्ति आपने और आपकी टीम ने इस अंक के रूप में पूरी कर दी है। लगा कि कला से संबंधित पत्रिका की शक्ल-सूरत और सीरत दरअसल ऐसी ही होना चाहिए। पत्रकारिता के मार्ग पर पांच दशक से अधिक का काल खंड बीत जाने के आधार पर मैं यह कह सकता हूँ, पत्रिका के नाम के अनुरूप प्रकाशन सामग्री जुटाने में बड़ी मेहनत और सूझ-बूझ का निवेश करना पड़ता है। आपने और आपकी टीम ने यह निवेश किया है और खूब किया है, इसलिए हार्दिक बधाई। मैं स्वीकार करता हूँ कि 'कला समय' का यह स्वरूप बनाये रखना कठिन काम है। मुझे पूर्ण विश्वास है, आप और श्री लक्ष्मीकांत जवणे एवं आपके तीनों सहयोगी कठिन काम को भी सहज बनाने के लिए ही जन्में है। ईश्वर आप सभी की सामर्थ्य में सतत अभिवृद्धि करें। कुछ बात इस अंक की। श्री जवणे जी जिस विषय पर भी लिखते है, उसकी ऊँचाई को छू लेते हैं। इस अंक का उनका 'कला निकष' इसका प्रमाण है। उनके भीतर जो सर्जनात्मक उत्साह हरदम हिलौरें लेता रहता है- वह गजब का है। मुझे पूर्ण विश्वास है- वे 'कला-समय' को बहुत कुछ देंगे। आपने कला के संबंध में पद्मश्री प्रो. रमेशचन्द्र शाह से तीन पृष्ठों का आलेख लिखवा लिया, यह बड़ी बात है। कृपया अपनी इस ''कोशिश'' को जारी रखिये। भोपाल में कला के विविध रूपों से जुड़े, ऐसे ही और भी कई महापुरुष हैं, उन तक भी आप 'कला समय' को पहुंचाइये और लेख अथवा संस्मरण के रूप भी कुछ न कुछ प्राप्त कर लेने का सिलसिला शुरू कीजिए। आपको यह याद रखना होगा कि वे आपके पास नहीं आएँगे, आपको ही उनके पास जाना होगा। इसी भोपाल में पद्मश्री डॉ. वाकणकर की शिष्या डॉ. रेखा भटनागर पारंपरिक शैली में चित्रकारी का ऐसा काम कर रही है, जो अनूठा है। रंगकर्मी श्री अशोक बुलानी रंगकर्म की नई पीढ़ी तैयार करने में चुपचाप लगे हुए हैं। ऐसी बहुत-सी शख्सियतें हैं, जिनको 'कला समय' के पृष्ठों पर आना चाहिए। श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय की कला-सेवा हमें आह्लादित करती है। इस अंक में उनका आलेख भी बहुत पठनीय है। कद में छोटे पं. कोरवार ने कला-शिक्षण के क्षेत्र में वह कर दिखाया है, जो बेजोड़ है। उनका शिष्य समुदाय भी व्यापक है। अंक के शेष आलेख भी पठनीय है। श्री ललित शर्मा ने पं. रविशंकर का बहुत ज्ञानवर्धक साक्षात्कार लिया है, उन्हें बधाई। श्री श्याम मुंशी ने उस्ताद लतीफ खाँ पर अच्छा आलेख लिखा है। वे तो कला जगत से लंबे समय से गहरे जुड़े हुए हैं। उनसे कभी नृत्यांगना डॉ. लता मुंशी पर भी लिखवाने का प्रयास कीजिये। जागृति जी के आलेख ने गुरु-शिष्य परंपरा की विशेषताओं को अच्छी तरह रेखांकित किया है। संगीत की सरिता में नित स्नान करने वाले श्रीयुत राम मेश्राम से जितना संभव हो, उतना लिखवाने में संकोच न किया जाए। आप भी स्वीकार करेंगे कि शहरी चमक-दमक और मीडिया की कृपा से हमारी शहरी कलाएँ और प्रतिभाएँ तो प्रकाश में आ रही हैं, लेकिन कस्बों और ग्राम्य अंचलों में जो खजाना छिपा हुआ है, वह शनै: शनै: हमारे ज्ञान और संज्ञान की पहुँच के बाहर होता जा रहा है। लोक नृत्यों लोकगीतों, लोक कथाओं और लोक नाट्य (माच आदि) धीरे-धीरे हमारी पहुंच के बाहर होते जा रहे हैं। जब 'कला समय' राजस्थान के द्वार पर दस्तक दे सकता है, तो म.प्र. के ग्राम अंचलों तक क्यों नहीं पहुँच सकता? डॉ. श्रीराम परिहार, डॉ. कपिल तिवारी, श्री लक्ष्मीनारायण पयोधि, श्री वसंत निर्गुणे, श्री विनय उपाध्याय, डॉ. सुमन चौरे और श्री सुनील मिश्रा एवं श्रीमती पूर्णिमा चतुर्वेदी से चर्चा करके तो देखिये। दरअसल 'कला समय' को मैं एक 'कला जागरण आंदोलन' के औजार के रूप में देखता हूँ।

Scanned with CamScanner

पत्रिकाएँ तो इंटरनेट की महरबानी से ढेरों निकल रही हैं। 'कला समय' को विज्ञापन जीवी पत्रिकाओं के बीच अलग हटकर दिखना है। ईश्वर की कृपा से अब तो पत्रिका के लिए वित्तीय संसाधन भी जुटने लगे हैं। अंतत: नेताओं और नामचीन साहित्यकारों के जन्म दिवस पर कार्यक्रम होते हैं। उन पर लेखादि भी छपते हैं। क्या कला के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े दिवंगत महान कलाकारों को लेकर ऐसा नहीं होना चाहिए? पद्मश्री वामन ठाकरे, रामकिशन चंदेश्री, रंग निदेशक भानु चंदवासकर, रघुराज सिंह आदि को हमें क्या हर साल याद नहीं करना चाहिए? चित्रकार श्री किशोर उमरेकर को हम याद नहीं करेंगे तो कौन करेगा? सुन्दर और पठनीय अंक के लिए पुन: बधाई। - **युगेश शर्मा,** भोपाल (म.प्र.)

प्रति भँवरलाल श्रीवास, सम्पादक और लक्ष्मीकांत जवणे, सह संपादक बंधवर द्वय! आपके द्वारा मानस भवन में खंडेलवाल जी के सम्मान के अवसर पर हम लोगों को 'कला समय' पत्रिका के विषयोक्त अंक को हमें सौंपकर उपकृत किया। आपकी पत्रिका साहित्य के कला पक्ष का प्रतिनिधित्व करती हमारे अनेक परिचित और मित्र साहित्य चेताओं तथा कला परखी जनों की अप्रतिम योग्यता और क्षमता का समाकलन करती है। इस पत्रिका को आप दीर्घ अनुभवी और समर्पित कला पारखियों का नवयोग इसको अभिनव पहचान देता है। पत्रिका में प्रकाशित श्री नर्मदा प्रसाद उपाध्याय के 'लोक का कलात्मक पक्ष' आलेख का यह उद्धरण परम्परा की नूतन पहचान कराता है- 'हमारी सच्ची लोक दृष्टि या कला दृष्टि का मूल स्वर समग्रता की अवधारणा का है। और समग्रता का आशय है पूर्णता और यह पूर्णता तभी संभव है जब निजता का, स्व का विसर्जन हो।' श्री लक्ष्मीकांत जी की डॉ. कपिल तिवारी से मुलाकात कला में एक गहरी पैठ का प्रसंग है। इसमें श्री तिवारी जी के गहन चिंतन और मौलिकता के अनेक सूत्र विद्यमान हैं। अन्य रचनाकारों किशन तिवारी, लक्ष्मीनारायण पयोधि, श्रीराम परिहार और वसंत निर्गुणे आदि प्रिय जनों को पाकर मन मुग्ध हुआ। धन्यवाद। - **प्रभु दयाल मिश्र,** भोपाल (म.प्र.)

संपादक 'कला समय' भोपाल, श्रद्धेय श्रीवास जी, नमस्कार। वादे के मुताबिक अपने मत या प्रतिक्रिया भेजने की धृष्टता कर रहा हूँ। कला और लोक जीवन के अंतर्सम्बन्ध के रंगों को यथारूप पाठकों के समक्ष 'कला समय' के जरिए पेश करने सत्प्रयासपूर्ण अभियान सदा प्रशंसनीय पथ में भविष्य की ओर अग्रसर होगा। योजनाबद्ध तरीके, यही विश्वास है और कामना भी ऐसा ही करता हूँ। संपादकीय की पहली पंक्ति में यह संवाद 'प्रकृति और लोक में कुछ भी विलुप्त नहीं होता।' (अप्रैल-मई 2018 अंक) यह बताने की कोशिश आपने की है कि लोक में कला और शब्द सम्पदा के रूप में सदा विद्यमान रहती है। प्रकृति की तरह ही संकलन, संग्रहण, संचयन और सम्मिलन की प्रवृत्ति अपनाकर, जैसा आदरणीय लक्ष्मीकांत जवणे जी ने लोककला के प्रसंग में दृष्टि-पथ दिखाया है। हमारी लोक कला की विरासत को पढ़ने, समझने तथा मनन करने की तनिक भी कोशिश अगर हम करेंगे तो विशाल भंडार की असीम ज्ञान पाना शायद संभव नहीं है, लेकिन मुझे लगता है, 'कला समय' के सुमार्ग में सब संभव बनाने में सक्षम और सफल हो जाएंगे। लोक कला, लोक का कलात्मक पक्ष, राजस्थान की लोककलाएँ, लोक कला के सामने नयी चुनौतियाँ तथा अन्य आलेखों से कला पक्ष की दृष्टि और सृष्टि बताने के सत्प्रयासों में आप सब हैं ही। विभिन्न ऐतिहासिक काल खंड़ों में हम बता नहीं पाए, आक्रमणकारियों से बचाने के चक्कर में छुपाने की बाध्यता भी आई या फिर वैश्वीकरण में फँसकर सोच को सुदृढ़ और संकल्पित बना नहीं पा रहे हैं। लेकिन लोक में विद्यमान शक्ति को जब श्रोत और साथ मिलते हैं तो पुन: पूर्व स्थिति में आने में देर नहीं लगेगी, इस दिशा में 'कला समय' की भूमिका, योगदान तथा सहयोग की जरूरत है।- **बिर्ख खडका डुवर्सेली**(दार्जिलिंग)

कला समय का अप्रैल-मई अंक हर दृष्टि से महत्वपूर्ण और संग्रहणीय है। इस उत्तर आधुनिक समय में लोक कलाएं जो भारतीय संस्कृति का मूलाधार हैं, निरन्तर क्षरण प्रक्रिया से गुजर रही हैं। इस विशेषांक का शीर्षक वाक्य 'विलुप्त होती लोक कलाएं' बेहद समसामयिक एवं सार्थक है। लोक मनुष्य के हजारों विश्वासों, रीतियों, रूढ़ियों, व्यवहार परम्पराओं और संकल्पों से बनता है और कलाएं लोक का अविभाज्य अंग हैं। इन्हें एक दूसरे से अलग करके नहीं देखा जा सकता। राजस्थानी लोक कलाओं पर डॉ. महेन्द्र भानावत का आलेख एक शोध प्रबंध की तरह है। इसे पढ़कर लगता है यह कितने श्रम, साधना और खोज के बाद लिखा गया है। इस लेख से गुजरना मुझे लगता है राजस्थान से गुजरना है। एक आत्मीय रिश्ते के साथ। लोककला के विशेषज्ञ डॉ. कपिल तिवारी का साक्षात्कार लोक और उसमें व्याप्त कलाओं के अनजाने पहलुओं को उजागर करता है। नर्मदा प्रसाद उपाध्याय, श्रीराम परिहार, वसन्त निरगुणे के आलेख अंक को गरिमा प्रदान करते हैं। सम्पूर्ण अंक के लिए कला समय का संपादक मंडल बधाई का पात्र है-बधाई। - **शिवकुमार अर्चन,** भोपाल (म.प्र.)

कला समय पत्रिका परिवार का यह बहुत ही सराहनीय कार्य है, जो गुरु शिष्य परम्परा को समाज के समक्ष प्रस्तुत कर भारतीय संस्कृति की गौरव गरिमा को विश्व पटल पर अंकित कर हम जैसे लोगों से गुरु शिष्य के अंत: संवाद जो कुछ गुरु के साथ चले जाते हैं, और कुछ शिष्य के साथ चले जाते हैं। भारत की गुरु शिष्य परम्परा, गुरुकुल व्यवस्था विश्व को एक अद्वितीय देन है। यदि भारत को विश्व गुरु, सोने की चिड़िया और चक्रवर्ती बनाना है तो पुन: गुरुकुल परम्परा को फिर समाज में सम्मान के साथ प्रतिष्ठित करना होगा।- **डॉ. संतोष नामदेव**, हरिद्वार (उत्तराखंड)

■

Scanned with CamScanner

नन्हें कलाकारों की दुनिया

यह मुन्नियों और मुन्नों का संसार हैं, इसमें किसी भी किस्म की बिना छापवाले वाले मनों की चौकड़ियाँ और कुलांचे हैं। इन नवांकुरों की भावी छलांगों की सम्भावनाओं को यह पृष्ठ समर्पित हैं-कला समय।

ऋषित चक्रवर्ती

सुप्रसिद्ध शास्त्रीय गायिका कौशकी चक्रवर्ती के सुपुत्र

हीर सिसोदिया (उदयपुर,राजस्थान)

गुरु वंदना महोत्सव, संस्था मधुवन के मंच पर प्रस्तुति (रवीन्द्र भवन) भोपाल

सुश्री प्राची चौकसे के निर्देशन में नृत्य मुद्रा में बालिकाएँ

गुरु वंदना महोत्सव, संस्था मधुवन के मंच पर प्रस्तुति (रवीन्द्र भवन) भोपाल

Scanned with CamScanner

महिला प्रतिभाएँ वक्र रेखाओं में

- निर्मिश ठाकर

लता मंगेशकर

आपको अनेक अनेक धन्यवाद व बधाई !
आपने मेरा गोल आकार खूब बनाया ।

शुभा मुद्गल

अभिनन्दन सहित
- शुभा

I am glad you associate me with good music: Tanpura means good music. Thanks!

अनुराधा पौडवाल

आपने मुझे ज्यादा सुंदर किया है
आशा भोसले

आशा भोसले

Scanned with CamScanner

मध्यप्रदेश में
भू-स्वामी किसान और बटाईदार के
हक अब सुरक्षित

नरेन्द्र मोदी
प्रधानमंत्री

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

यह नियम बनाने वाला मध्यप्रदेश देश का पहला राज्य

प्रदेश सरकार ने किया भू-स्वामी और बटाईदार के हितों का संरक्षण अधिनियम 2016 लागू

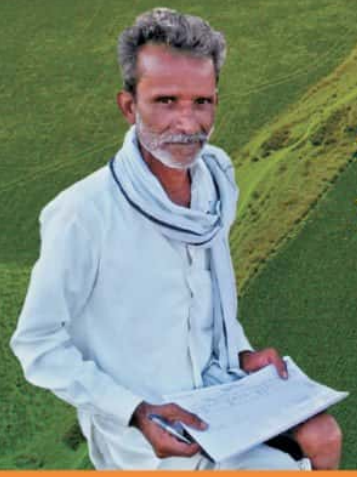

भूमिस्वामी किसान अब निश्चिंत होकर बटाई पर भूमि दे सकेगा।

- कृषि भूमि एक बार में पांच साल के लिए बटाई पर दी जा सकेगी।
- बटाई पर देने के बाद भी भू-स्वामी के अधिकार सुरक्षित रहेंगे। पांच साल के अनुबंध के बाद, भूमि फिर से बटाई पर दी जा सकेगी।
- यदि बटाईदार भूमि बटाई अनुबंध समाप्त होने के बाद भी भूमि वापस नहीं सौंपता है, तो अतिक्रामक माना जायेगा और विवाद की स्थिति में तहसीलदार द्वारा निराकरण किया जायेगा।

सबके हित का करती ख्याल
मध्यप्रदेश सरकार

मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा जारी

/CMMadhyaPradesh /CMMadhyaPradesh

D17006

Scanned with CamScanner

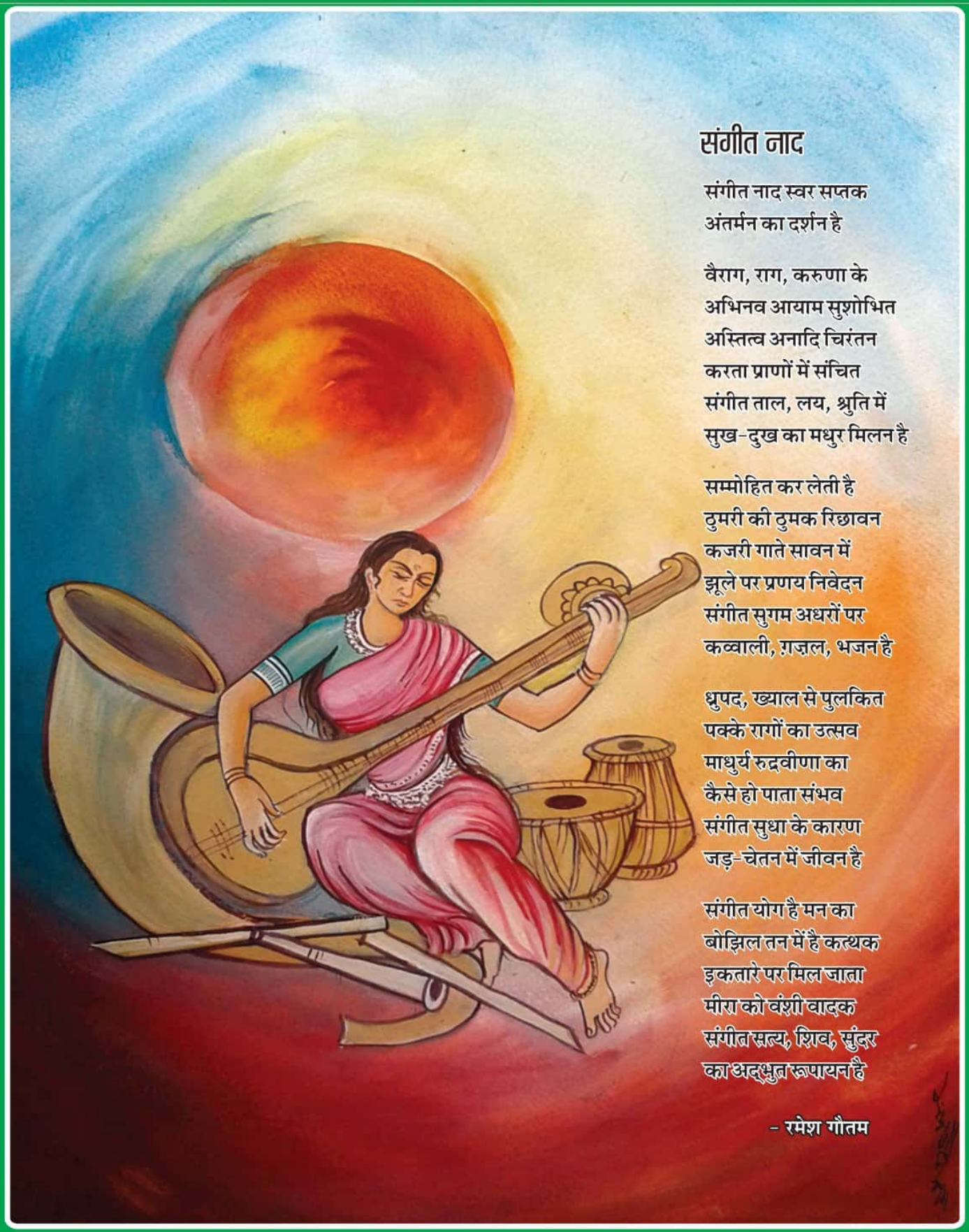

संगीत नाद

संगीत नाद स्वर सप्तक
अंतर्मन का दर्शन है

वैराग, राग, करुणा के
अभिनव आयाम सुशोभित
अस्तित्व अनादि चिरंतन
करता प्राणों में संचित
संगीत ताल, लय, श्रुति में
सुख-दुख का मधुर मिलन है

सम्मोहित कर लेती है
ठुमरी की ठुमक रिछावन
कजरी गाते सावन में
झूले पर प्रणय निवेदन
संगीत सुगम अधरों पर
कव्वाली, ग़ज़ल, भजन है

ध्रुपद, ख्याल से पुलकित
पक्के रागों का उत्सव
माधुर्य रुद्रवीणा का
कैसे हो पाता संभव
संगीत सुधा के कारण
जड़-चेतन में जीवन है

संगीत योग है मन का
बोझिल तन में है कत्थक
इकतारे पर मिल जाता
मीरा को वंशी वादक
संगीत सत्य, शिव, सुंदर
का अद्भुत रूपायन है

– रमेश गौतम

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वात्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा दृष्टि ऑफसेट, 36-37, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन नं-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक-भँवरलाल श्रीवास

Scanned with CamScanner